

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180473

UNIVERSAL
LIBRARY

—43—30-1-71—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. *H83*

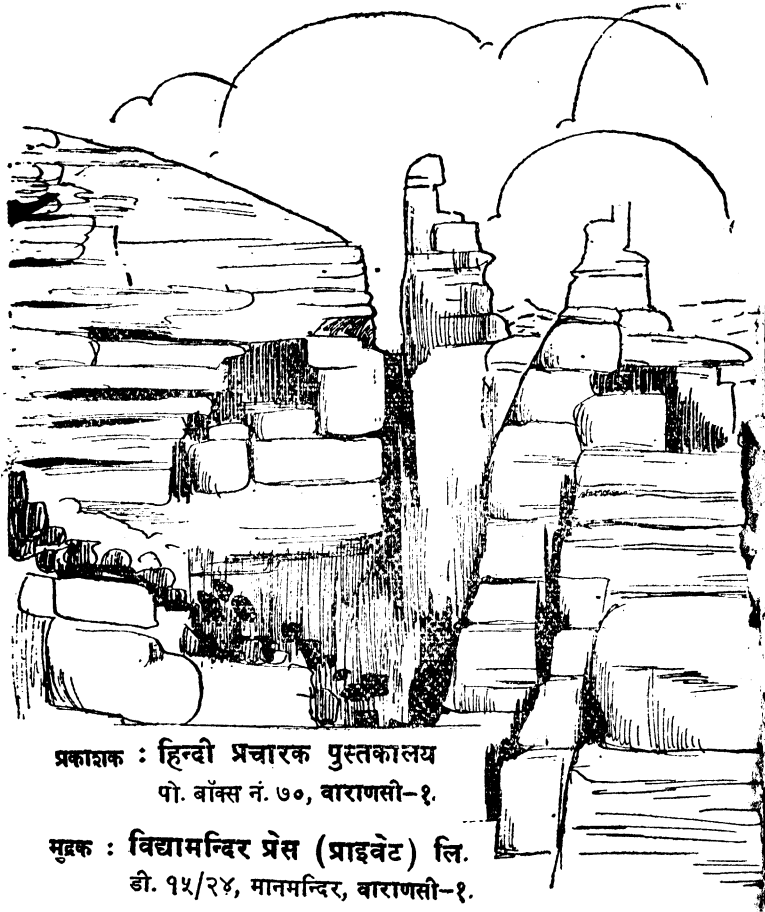
#.
Accession No. *3955-*

Author *H26T*

94 ELGAR

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.



प्रकाशक : हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
पो. बॉक्स नं. ७०, वाराणसी-१.

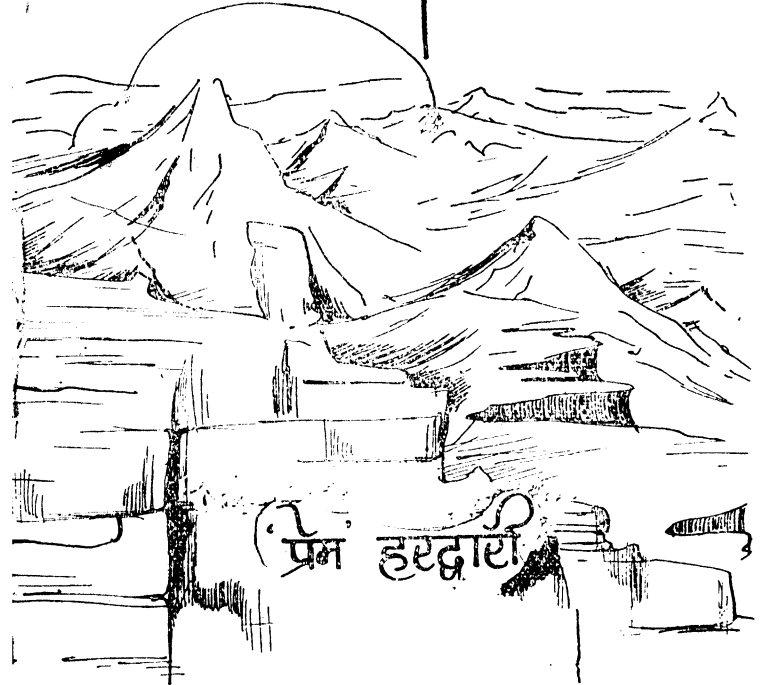
मुद्रक : विद्यामन्दिर प्रेस (प्राइवेट) लि.
डी. १५/२४, मानमन्दिर, वाराणसी-१.

संस्करण : प्रथम • १९६३

1/-

54—TIBBET KA RAHASYA : 'Prem' Hardwari •
(Novel)

तिब्बत का रहस्य



प्रेम हार्दारी

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय

वाराणसी-१.



• पञ्जाबी, अंग्रेजी तथा उर्दू की कई पुस्तकों के सफल अनुवादक, श्री 'प्रेम हरद्वारी' लेखक तथा कथाकार के साथ ही बालसाहित्य के प्रमुख लेखक और कवि हैं ।

- ६ प्राचीन तिब्बत के विचित्र मठ और उनके रक्षक मोम्पा, उनके भीतर चलनेवाले भयंकर षड्यन्त्र और विचित्र परम्पराओं का रोमांचक विवरण और साहसिक घटनाओं का चित्रण, अंग्रेजी की कई पुस्तकों के आधार पर उपस्थित किया गया है । इस लोमहर्षक कृति का घटना वैचित्र्य तथा घटना-विकास की प्रौढ़ता और शक्ति इस उपन्यास के श्रेष्ठ आकर्षण हैं ।



तिब्बत का रहस्य

● यह घटना तब की है, जबकि तिब्बत पूर्ण स्वतंत्र था और वह चीनी अजगर के पाश में नहीं फँसा था। दलाई लामा ही धार्मिक अथवा राजनैतिक शासक था—और दूर-दूर छोटे-मोटे देहातों में स्थानीय लामाओं का भी थोड़ा-बहुत प्रभाव था।

:०:

:०:

:०:

आपके लिए एक पत्र है, बॉस ! और बात जरूरी भी..."

प्रसिद्ध जासूस अशोक ने अपनी मेज से सिर ऊपर उठाया और जल्दी से अपने सहकारी सुन्दर के हाथ से एक लिफाफा ले लिया।

लिफाफे पर 'अशोक सान्याल, प्राइवेट जासूस, दलाल स्ट्रीट, बम्बई' का पता लिखा था और ऊपर एक कोने में 'आवश्यक' शब्द भी लिखा था।

लिफाफा खोलकर पत्र निकालते हुए अशोक ने पूछा—"इसे कौन लाया है?"

"एक ड्राइवर—और वह उत्तर का प्रतीक्षा कर रहा है।"

जासूस ने सर हिलाया और ध्यान से पत्र पढ़ने लगे। फिर उसे सुन्दर की तरफ बढ़ाते हुए कहा—"इसे पढ़ो।"

पत्र की लिखावट से मालूम पड़ता था कि वह बहुत जल्दी में लिखा गया है।

उसमें लिखा था—"मैं चाहता हूँ कि आप फौरन यहाँ चले आयें। मौत और ज़िन्दगी का सवाल है। मिलने पर ही बताऊँगा। मैं कल रात ही बम्बई पहुँचा हूँ; लेकिन यह आवश्यक है कि मेरे यहाँ आने की बात का किसी को पता न चले। मानवता के नाते

फौरन चले आइए ! मेरे ड्राइवर पर भरोसा करें। वह आपको मेरे पास पहुँचा देगा। एक बात और ! आप मुझे बिल्कुल बदला हुआ पायेंगे—जल्दी चले आइए। एक-एक क्षण बहुत कीमती है—” जे० मोदी

अशोक की तरफ गंभीर चेहरे से देखते हुए सुन्दर ने कहा—
“मालूम पड़ता है कि लिखनेवाला सचमुच काफी परेशानी में है।

“हाँ ठीक कहते हो। जिसने यह पत्र लिखा है, उसे मैं अच्छे तरह से जानता हूँ। डॉ० जयन्त मोदी तिब्बत यात्रा में मेरे भण्डारी के साथ गये थे।”

सुन्दर चौका—“हाँ अब मैं जान गया, अखबार में छपा था। लेकिन बाँस, उनके बारे में तो यह मान लिया गया था कि सब लोग मर गये हैं। उनके विषय में सुने हुए करीब एक साल से अधिक हो गया है।”

“हाँ...अठारह महीने पहले मेजर भण्डारी ने तिब्बत की यात्रा की थी। उनका इरादा था कि भारत और तिब्बत के बीच एक नया व्यापारिक रास्ता निकाला जाय; लेकिन ‘ग्यांत्सी’ के आगे चल कर उस पार्टी का कुछ पता नहीं चला। यह सोचा गया कि शायद कुछ तिब्बती आदिवासियों ने उन्हें मार डाला होगा, या पहाड़ों के बीच बर्फ में दब कर वे सब मर गये होंगे। बहुत खोजने पर भी उनके विषय में कुछ पता न चला। सब लोग एक दम ही गायब हो गए। भारत सरकार भी तिब्बत के विरुद्ध कुछ कर नहीं सकती थी, क्योंकि उनके पास ऐसा कोई सबूत नहीं था, जिससे पता चले कि उन पर अत्याचार किया गया है।”

“और जो डाक्टर उनके साथ गया था, अब बम्बई में लौट आया है !”—सुन्दर ने कुछ काँपती आवाज में कहा।

“हाँ”, अशोक ने धीरे से कहा—“डॉक्टर जयन्त लौट आया है ...पर कहाँ से ? यह पता नहीं । मैं जानता हूँ कि वह बहुत बहादुर और होशियार व्यक्ति है, लेकिन पत्र से मालूम पड़ता है कि उस पर किसी आतंक का प्रभाव है । कुछ दाल में काला है, जरूर कोई विचित्र घटना घटी है ।”

“वह कहता है कि वह काफी बदल गया है”—सुन्दर ने कहा ।
 कुर्सी पीछे ढकेलते हुए अशोक सान्याल उठे—“ड्राइवर से कह दो कि हम लोग उसके साथ चलेंगे ।”

:०:

:०:

:०:

दस मिनट बाद ही अशोक और सुन्दर डॉ० जयन्त मोदी की गाड़ी में बम्बई की सड़कें पार कर रहे थे । अशोक ने पत्र की यथार्थता पर एक मिनट के लिए भी शंका नहीं की । वे जयन्त की लिखावट अच्छी तरह पहचाने थे और उन्हें विश्वास था कि इसमें कोई धोखा नहीं है ।

“कुछ अन्दाज है, बाँस ! हम लोग कहाँ जा रहे हैं ?” सुन्दर ने पूछा ।

“डॉक्टर जयन्त का मकान माटुंगा में किसी जगह पर है,” अशोक ने कहा—“ड्राइवर उसी तरफ चल रहा है ।”

फिर दोनों चुप हो गये । उनके मस्तिष्क में वही पत्र घूम रहा था—जो उस व्यक्ति ने भेजा था, जिसे कभी गुम घोषित किया जा चुका था और अब न जाने कहाँ से लौटा है !

“क्या आप डॉक्टर जयन्त को अच्छी तरह जानते हैं ?” अचानक सुन्दर ने पूछ लिया ।

“हाँ मैं उनसे कई दफे मिल चुका हूँ । वह अपराधी संसार में काफी दिलचस्पी रखता है ।”

करीब घण्टे भर बाद मोटर एक मोड़ पर घूमी और थोड़ा आगे बढ़ कर रुक गई ।

बगल में एक बड़ा-सा बँगला दिखाई पड़ रहा था, जो सड़क से हट कर बना था । अशोक सान्याल और सुन्दर उतरे और एक ही नजर में उन्हें पता लग गया कि मकान की सब खिड़कियों में पर्दे पड़े हैं; सर्फ एक को छोड़ कर, जो दूसरी मंजिल पर थी । मकान के इर्द-गिर्द लम्बी-लम्बी घास उग आई थी, जिससे मालूम पड़ता था कि इसकी सफाई को काफी दिनों से कोई देख-भाल नहीं कर रहा था ।

ड्राइवर ने दरवाजे पर लगी पुरानी फैशन की घण्टी बजाई । अन्दर किसी के चलने की आवाज आई, फिर कुंडी खुलने की और इसके बाद दरवाजे में एक प्रौढ़ स्त्री की शक्ल दिखाई पड़ी । उसने अशोक और सुन्दर की तरफ लाल-लाल आँखों से देखा, जो कि शायद रोने से हो गई थीं । अशोक ने पहचान लिया कि वह डॉक्टर जयन्त के मकान की देख-रेख करनेवाले की पत्नी श्यामाबाई थी ।

“आ जाइए मि० अशोक ! वह आप का इन्तजार ही कर रहे हैं ।” श्यामा फुसफुसाई ।

सुन्दर को उसके ‘वह’ में कुछ अजीब बात मालूम पड़ी । उसने उसके लिए ‘मालिक’ या ‘डॉक्टर साहब’ क्यों नहीं कहा ? यद्यपि ज़रा-सी बात थी, लेकिन सुन्दर को इसमें भी रहस्य मालूम पड़ा । जब श्यामा बाई दरवाजा बन्द करके अन्दर से कुण्डा लगा चुकी, तो वह दोनों को दूसरी मंजिल की तरफ ले चली । मकान में से सीलन की महक आ रही थी । दूसरी मंजिल के एक कमरे के सामने रुक कर श्यामा ने कहा—“अशोक बाबू आप उन्हें बहुत बदला हुआ पायेंगे !” तब उसने धीरे से किवाड़ खटखटाया ।

“कौन है ?” अन्दर से एक आवाज आई ।

श्यामाबाई—“अशोक बाबू आये हैं...मालिक !”

कुर्सी के पीछे हटने की आवाज आई और तब किसी ने फर्श पर चल कर दरवाजे का कुण्डा खोला और वापस लौट गया ।

“अन्दर चले आओ, अशोक...मेरे मित्र !”

श्यामाबाई मुड़ी और नीचे चली गई ।

“सुन्दर तुम यहीं रुको ।” फिर हैंडल घुमा कर अशोक अन्दर चले गये और दरवाजा बन्द कर दिया । लेकिन अन्दर जो कुछ भी उन्होंने देखा—उसके कारण एकाएक वह काँप उठे । आँखें भय से फैल गईं ।

मेज के पास कुर्सी पर एक व्यक्ति बैठा था—मनुष्य का हाँचा मात्र था वह ! भवों के पास तीन लाल निशान बने थे । नाक किसी चोट के कारण कुचली हुई और बदसूरत भी...कान भी कट गये थे । एक आँख पर काली पट्टी बँधी थी, गाल खोखले और धँसे हुए थे । कमर झुक गई थी । एक हाथ में पट्टी बँधी थी और उसकी अँगुलियाँ का पता न था ।

“जयन्त !” अशोक की आवाज कड़ी थी । दो कदमों में उन्होंने कमरा पार किया और घुटने के बल बैठ कर पूछा—“मेरे मित्र...तुम्हारी यह हालत किसने की ?”

एक क्षण के लिए जयन्त शान्त रहा; लेकिन फिर काँपती हुई आवाज में बोला—“तुम पूछते हो कि यह हालत किसने की ? मैं क्या जवाब दूँ, इन्सान, हैवान या पागल साधू ने !”

फिर उसने अपनी कुर्सी घुमाई और लाल आँखों से जासूस की तरफ देखा ।

“ल्हासा की पवित्र नदी ‘कीचू’ के तट के किनारे एक आश्रम बना है जो पहले बहुत प्रसिद्ध था । उन अभागी दीवारों के अन्दर बैठ कर काँगपू मनुष्यों और इन्सानों की किस्मत बनाता है । वह

काँगपू, जो कि अमर है—काँगपू अर्थात् नर-पिशाच ! उसकी दुष्ट आत्मा मर कर भी चैन नहीं पा सकती । काँगपू, जीवित गिद्ध—तिब्बत का बादशाह... दलाईलामा से बढ़ कर जिसके पास शक्ति है... वही काँगपू !” और उसकी आवाज तेज हो गई—“काँगपू जिसने गैर-तिब्बतियों के विनाश की कसम खाई है ।”

फिर शान्त हो कर बोला—“मेरे मित्र ! मुझे तुमसे बहुत कुछ कहना है । बेचारा मेजर भण्डारी मेरे विचार से मर गया होगा । मैं बहुत बड़ी मुसीबतें झेल कर भाग सका हूँ । काँगपू की परछाईं हर समय मुझे घेरे रहती है और मैं ज्यादा दिन जीवित भी नहीं रह सकता; लेकिन मेरे बता चुकने के बाद तुम्हारी समझ में आ जायेगा । और समझने पर तुम जान सकोगे कि तुम्हें क्या करना चाहिए !”

:०:

:०:

:०:

अशोक के कहने पर डाक्टर जयन्त इस बात के लिए राजी हो गये कि सुन्दर भी उसकी कहानी सुने । बुलाने पर जब सुन्दर अन्दर आया, तो उसे मालूम पड़ा कि उस का खून नसों में जम-सा रहा है, जब उसने देखा कि डाक्टर की क्या दशा है ! किस जालिम ने यह हरकत की है ?

डाक्टर जयन्त ने सुन्दर के मन के भाव जान लिए—“हाँ... किसी समय मैं भी ठीक तुम्हारी तरह था युवक... हूँ-पुष्ट... पर अब मुझे देख कर कोई नहीं कह सकता कि किसी जमाने में मैं बम्बई यूनिवर्सिटी का चैम्पियन रहा हूँ । खैर, लेकिन अब मैं मृत्यु के बहुत करीब पहुँच चुका हूँ और उसी का इन्तज़ार कर रहा हूँ ।”

“मौत की बात क्यों ?” अशोक ने धीरे से कहा—“तुम उन्हें परास्त कर अपने मित्रों के बीच फिर से आ गये हो ।”

“लेकिन, उससे मुझे क्या लाभ होगा ?”—जयन्त ने कहा—
 “मैं जीवित ही बच निकला और आ गया । इसके लिए मैं भगवान्
 को धन्यवाद देता हूँ; लेकिन जिस मृत्यु का मैं इन्तजार कर रहा
 हूँ, वह तिब्बत से मेरे पीछे-पीछे लगी हुई है । वह इस घर में चक्कर
 लगा रही है । मौत जल्दी और भयानक रूप में मेरे ऊपर टूटेगी,
 जिसे काँगपू ने मेरे लिए बनाया है । और यह प्रतीक्षा बहुत ही
 कष्टकारक है !” उसने अशोक की तरफ घूम कर कहा—“जब
 मैं तुम्हें कहानी सुना चुकूँ तो मैं चाहता हूँ कि तुम यहाँ से सीधे
 विदेश-मंत्रालय के सचिव प्रेमेन्द्र मित्रा के पास दिल्ली जाओ
 और उन्हें सब-कुछ बता कर सावधान कर दो—यह कार्य बहुत ही
 जरूरी है । शायद वह विश्वास न करें । लेकिन...”

फिर चीखा कर वह बोला—“हाँ, मेरे दोस्त सुनो ! उस
 भयानक यात्रा की कहानी मैं तुम्हें सुनाऊँगा । ग्यात्सी छोड़ने के
 बाद हम लोग ‘कैहों’ दर्रे से हो कर ल्हासा की तरफ बढ़ने लगे । मार्ग
 के गाँवों में रहनेवाले लोग जंगली और मूर्ख थे । मालूम पड़ता
 था कि वह हम से नहीं बल्कि हम से मित्रता करने में डरते थे ।
 हमारे साथी हमें छोड़ने लगे—पहले एक-एक करके, फिर दो और
 फिर तीन-तीन; लेकिन मेजर भण्डारी बढ़ते गये और एक दिन शाम
 को हम ‘कीचू’ नदी के तट पर पहुँच गए ।”

जयन्त कुछ क्षण रुका और अपनी भयानक भवों पर हाथ
 फेर कर फिर कहने लगा—

उस तेज नदी को हम लोगों ने खड़ की नावों में बैठ कर
 पार किया, यद्यपि इसमें बहुत कठिनाई पड़ी । जब रात हो गई, तो
 हम लोगों ने एक जगह डेरा डाला । सुबह उठ कर हमने देखा
 कि जो लोग हमारे साथ आए थे, वे सब हमें छोड़ कर चले
 गये हैं । वहाँ सिर्फ मैं, मेजर प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता डॉ० भटनागर

और अदम्य साहसी शिकारी ठाकुर रक्षपालसिंह ही बाकी रह गये थे । हम लोगों ने एक मीटिंग की और फ़ौरन तय किया कि ल्हासा की तरफ बढ़ना चाहिए—रहस्यमय ल्हासा ! हम लोग सोच रहे थे कि हमारे साथी भाग क्यों गये ? उन्हें हम काफी पैसे देते थे और उनके साथ काफ़ी अच्छा व्यवहार भी करते थे । खैर, अगले दो दिन धीरे-धीरे हम लोग आगे बढ़ते गये और दूसरे दिन शाम को ल्हासा से एक मील दूर डेरा डाला । अगली सुबह हमलोग ल्हासा में प्रवेश करनेवाले थे । परन्तु मेरे मित्र ऐसा नहीं हो सका ।”

थोड़ी देर रुकने के बाद डॉ० जयन्त ने फिर कहना शुरू किया —“उस दिन शाम को सूरज डूबने लगा, तो मैं और मेजर भण्डारी पास की एक पहाड़ी पर चढ़ कर नीचे का शहर देखने लगे । सूरज की रोशनी में जोखंग मठ की बुर्जियाँ सोने के समान चमक रही थीं और ज्यों-ज्यों डूबते सूरज की किरणें ल्हासा पर पड़ती थीं, त्यों-त्यों सारा शहर गहरे लाल रंग में सरोबार-सा प्रतीत होता था । क्या यह अपशकुन था ! चुपचाप हम लोग अपने खेमे में वापस लौट आये—हम लोगों ने अपना खैमा पुराने आश्रम की संगीन दीवार के पीछे गाड़ा था । उस दिन मेरे मस्तिष्क में अजीब-अजीब विचार आ रहे थे, लेकिन हम लोग सोने चले गये और पता नहीं कि मैं कितनी देर सोया !”

रुक कर डाक्टर ने गहरी साँस ली और बोला—“एकाएक मैं चौंक पड़ा, पता नहीं किस भय से... और हाथ बढ़ा कर खेमे की दीवार टटोलने लगा । उस काली रात मैं मैं उठ बैठा और अपनी दियासलाई टटोलने लगा । तभी मेरी कलाई से कुछ बजा और मुझे मालूम पड़ा कि मैं दीवार में जंजीरों द्वारा बाँध दिया गया हूँ—एक दम मेरे दिमाग में हजारों प्रश्न घूम गये—कैसे मैंने उस अंधेरी कोठरी में घंटों व्यतीत किये, मैं आप को नहीं सुनाऊँगा ।

केवल एक दफ़ा में जोर से चिल्लाया, यह मालूम करने के लिए कि मेरे साथी कहाँ हैं। लेकिन आवाज उसी काल-कोठरी में गूँज कर रह गई। मैं वहाँ अकेला ही था। मुझे मालूम नहीं कि मैं कहाँ था और वहाँ कैसे पहुँचा ! और मैं इन्तजार करता रहा... करता रहा !”

रोशनी की कोई झलक मेरे पास नहीं आती थी। मेरी घड़ी, दियासलाई, रिवाल्वर सब कुछ चला गया था। आखिरकार एक दिन दरवाजा खुला और अपने बदन को ढके हुए चार दानवा-कार खम्पा अन्दर घुसे।

उनमें से एक लालटेन लिए था। उसकी रोशनी में मैंने देखा कि जिस कोठरी में मैं क़ैद था, उसमें कोई खिड़की इत्यादि नहीं थी। जंजीर खोलने से पहले उन लोगों ने मेरे हाथ पीछे बाँध दिये। मेरे प्रश्नों का उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया, बल्कि चुपचाप काम करते गए। जब मेरी जंजीरें खुल गईं, तो वह सब मेरे चारों तरफ खड़े हो गए और मुझे इशारा किया कि मुझे उनके साथ चलना है। मैं चल दिया और कई अन्धेरे गलियारे पार करते हुए हम लोग अन्दर-वाले मन्दिर में पहुँचे। यह पत्थर का बना था और उसकी काफी ऊँची छत थी। उस में मोमबत्ती और सोने के बने लैम्पों का धीमा प्रकाश था; और तब मैंने अपने दोस्तों को देखा। मेरी तरह बँधे हुए वह भी बुद्ध की त्रिमूर्ति के सामने खड़े थे। यह तीन मूर्तियाँ भूत, वर्तमान और भविष्य के बुद्ध की थीं। मैं भी अपने साथियों के पास खड़ा कर दिया गया और जो लोग मुझे वहाँ ले गये थे—चले गये। किसी तरह हम लोग चुप रहे। हम लोग इन्तजार करते रहे। जानते हो किसका ? उफ़...मैं कैसे वर्णन करूँ ! उस जगह की हालत देख कर मैं चीख उठा। ऐसा भयानक वातावरण था। तब मालूम पड़ा कि बहुत दूर कोई समूह-गान हो रहा है; लेकिन बाद में

मेरी समझ में आया कि चालाकी से कोई आवाज पैदा करता है और उसकी प्रतिध्वनि भयानक रूप में सुनाई पड़ती है। यह आवाज अचानक रुक गई और किसी के बोलने की आवाज मेरे कान में पड़ी। यह कहाँ से आ रही थी मुझे नहीं मालूम। लेकिन जहाँ तक मुझे याद है मैं आपको सुनाता हूँ, जो कुछ उसने कहा—

‘ऐ मूर्ख, विदेशियो ! काँगपू की बात को सुनो। तुम लोग मेरे द्वारा यहाँ गिरफ्तार कराके मँगवाये गए हो। तुम अपने शिकारी काफ़िले पवित्र मठों के बीच में से जाना चाहते हो। सुनो ! मैं तुम और तुम्हारी भाषा बोलनेवाले सब का काल हूँ। मुझे भगवान् बुद्ध ने चुना है। वह दिन समीप है, जब मैं—काँगपू—तुम्हारे तथा कथिन सम्य संसार के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दूँगा। वह दिन समीप है, जब तुम्हारे देश पर पूर्वी लोगों का अधिकार हो जायगा। वह दिन समीप है, जब ल्हासा सारी दुनिया पर राज्य करेगा और मैं काँगपू ल्हासा में राज्य करूँगा, यह निश्चित है। ऐसा होता है और जो होता है वह जरूर होता रहेगा। सुनो, ओ मूर्खों ! मैं अमर हूँ। हजारों वर्षों से मैं बुद्ध के इसी मन्दिर में रहता आया हूँ और तुम लोगों को; तुम्हारी थल सेना, जल सेना, नभ सेना और तुम्हारे राज्य को देखता रहा हूँ। हाँ, मैं देखता था और इन्तजार करता था और अब बुद्ध ने आदेश दिया है कि अब ल्हासा अपना कार्य शुरू करेगा। वह सारी दुनिया पर राज्य करेगा और मैं काँगपू—बुद्ध का अवतार—ल्हासा पर !’

“आवाज बन्द हो गई”—जयन्त कहता गया—“और फिर शान्ति छा गई। खम्पा सिपाही फिर आ गए। हम जानते थे कि लड़ना बेकार था। हमें फिर अपने-अपने अँधियारे कमरों में बन्द कर दिया गया। हमें इस बात में शक नहीं था कि हम लोगों की किस्मत एक बेवकूफ पुजारी के हाथ में है। मैंने अपने मन से हजार

बार यह प्रश्न पूछा कि हम लोगों को उसी दिन मार क्यों नहीं डाला गया, और तब सत्य धीरे-धीरे मेरे सामने आने लगा ।”

जयन्त रुक गया । न तो अशोक ने और न सुन्दर ने ही बोलने की कोशिश की । अशोक की तरफ मुड़ कर जयन्त फिर कहने लगा—

“तुमने मुझे अपनी ही तरह का हृष्ट-पुष्ट मनुष्य देखा होगा, लेकिन मैंने भाग कर जान बचाने की चेष्टा में अपनी हालत बिगाड़ ली है । हर रोज हम चारों उस मन्दिर में ले जाये जाते थे और हमारे सामने विचित्र-विचित्र बातें होती थी । भयंकर और वीभत्स ! जिनके विषय में मैं नहीं सुनाऊँगा । रोज मैं देखता था कि मेरी आत्मशक्ति कम होती जा रही है और जो बलियाँ बुद्ध के नाम पर हमारे सामने दी जाती थीं, हमें मामूली-सी मालूम पड़ने लगीं । उन सबके हम आदी हो गए । मुझे लगता था कि मेरे दिमाग ने अब काम करना बन्द कर दिया है । लेकिन एक दिन जब मैं अपने दोस्तों के साथ बुद्ध की मूर्ति के सामने खड़ा था, तो मुझे मालूम पड़ा कि मुझमें असीम ताकत आ गई है । मुझे लगा कि कोई मुझे धूर रहा है । बहुत ताकत लगा कर मैंने अपनी नज़र ऊपर उठाई । मैंने देखा कि बुद्ध की मूर्ति की आँखों के छेद से दो जीवित आँखें मुझे घूर रही हैं । मुझे मालूम पड़ा कि उन आँखों में पाप भरा हुआ है । मैं अपनी सारी ताकत लगा कर चिल्लाया और आगे की तरफ झपटा । यद्यपि मेरे हाथ बँधे थे, किन्तु मैं उस मूर्ति पर टूट पड़ा और उसे कन्धे से धकेलने की चेष्टा करने लगा । मैंने उस पर थूक दिया । तब लोगों ने मुझे पकड़ लिया और ले गए । मुझे सुनाई पड़ा कि कांग्पू कुछ आदेश दे रहा है । मुझे वहाँ से खींच कर ले जाया गया और फिर मेरे मित्रों ! तुम अनुमान लगा सकते हो कि मुझ पर उन्होंने क्या अत्याचार किये होंगे !

“इसके बाद की कहानी छोटी है । मैं करीब-करीब मृत्यु के निकट पहुँच गया । मुझे एक बड़ी पत्थर की नाँद में लिटा दिया गया और उसमें धीरे-धीरे पानी भरते गए । नाँद के ऊपर लाल-गरम लोहे की सलाखें लगी थीं ।

“डूबने के डर से मुझे सर उठाना पड़ता था और सलाखों से छू जाता था तो जलन होती थी । यह भवों के लाल दाग इसी के कारण पड़ गये हैं । मैं बेहोश हो गया । लेकिन मेरी दवा की गई, ताकि और बदला लिया जा सके । मुझे जिस कोठरी में रखा गया, उसमें कई खिड़कियाँ भी थीं । हर रोज एक खम्पा मुझे खाना देने तथा मरहम-पट्टी करने आता था । मुझे अपने दोस्तों के विषय में कुछ भी पता नहीं था । मैंने ज्यादा कमजोर होने का बहाना किया, जितना वास्तव में था नहीं । इसलिए वह लामा कुछ लापरवाह-सा रहने लगा और तब एक दिन मौका पा कर मैं उस पर झपट पड़ा और उसे गला दबा कर मार डाला । उसके कपड़े निकाल कर मैंने पहन लिये और ठाठ से गलियारे में निकल गया । मुझसे कोई नहीं बोला । मैं भी किसी से नहीं बोला—मैं एक आँगन में पहुँच गया । यहाँ से बाहर जाने का रास्ता ढूँढ़ने के लिए मैं कुछ देर घूमता रहा और फिर मुझे एक दरवाजा दिखाई पड़ा । मेरी खुशी का ठिकाना न रहा, जब मैंने देखा कि वह खुला है । उनके बाहर निकल कर मैंने देखा कि मैं उस अभाग्य आश्रम के बाहर पहुँच गया हूँ ।

“मेरे मित्रो ! यदि मैं यह लिखने बैठ जाऊँ कि वहाँ से बम्बई तक कैसे पहुँचा, तो कई किताबें बन जायें । खैर मैं घर पहुँच गया । रास्ते में दो बार बिल्कुल मरते-मरते बचा, लेकिन काँगपू का हाथ मेरी तरफ फैल गया है और यहाँ इस बन्द कमरे में भी मैं सुरक्षित नहीं हूँ !”

और तब पहली बार उसकी नज़रों में डर का आभास हुआ । सुन्दर को वह बिल्कुल उस लोमड़ी की तरह मालूम पड़ा, जिसके पीछे शिकारी पड़े हों । इतने में बिना कुछ बताए जयन्त अपनी कुर्सी में लुढ़क गया और उसे मूर्च्छा-सी आ गई ।

“बेहोश हो गया !”—अशोक ने फौरन कहा और उसे कुर्सी से उठा कर पलंग पर लिटा दिया । सुन्दर फौरन बाहर गया और बिना किसी को बताए एक गिलास पानी ले आया । अशोक की देख-रेख और उपचार में जयन्त को होश आने लगा और तब धीरे से उसने कहा—“माफ करना दोस्त ! अब मैं ठीक हूँ ।” फिर अशोक की तरफ मुँह कर कहने लगा—“तुमने मेरी कहानी सुन ली । इसे श्री प्रेमेन्द्र मित्रा को जरूर बता देना । केन्द्रीय सचिवालय में सिर्फ वही एक व्यक्ति ऐसा है, जो इस बात में पूरी दिलचस्पी ले सकता है । यह काँगपू खतरनाक है । सेलाई के उस आश्रम में ऐसी चिनगारी पैदा होगी, जिससे सारी दुनिया धधक उठेगी । तिब्बत और और भारत के बीच युद्ध—जरा सोचो तो !”

“क्या तुम्हारा यह विचार नहीं है कि काँगपू एक झूठा बदमाश है और अपने साथियों में ख्याति प्राप्त करना चाहता ?” अशोक ने पूछा ।

“नहो, कदापि नहीं !” जयन्त ने कहा—“वह डरावनी लाल आँखें—उन्हे मैं अभी तक नहीं भूला हूँ ! वह भयानक आवाज—जिससे लोगो का खून जम जाय, वह साधु—झूठा धोखेबाज, खूनो हत्यारा सब कुछ है । लेकिन वह एक ताकत है—सरासर सुलगता बारूद ! और अगर वह रोका न गया तो वह भारत और तिब्बत जैसे पड़ोसी देशों को लड़ा ही देगा ।”

“मैं श्री मित्रा से अवश्य मिलूँगा,” अशोक ने कहा ।

“जरूर मिलो । उन्हें यदि यहाँ ला सको, तो मैं सब कुछ बता

दूँगा । मेरी बात का वह विश्वास कर लेंगे । युद्ध ! नर-नारियों और निरीह बच्चों की हत्या... और काँगपू की वे दो जलती हुई आँखें ! ! ”

जयन्त उठ कर बैठ गया । उसका सारा बदन काँप रहा था ।

“इसमें कोई शक नहीं है कि उन लोगों को मैं धोखा देने में सफल हुआ, जिन्हें काँगपू ने मुझे सस्ते में अपनी बात मनवा लेने के लिये तैनात किया था, लेकिन इस पर भी मैं ज्यादा देर बच नहीं सकता । मरने से मैं नहीं डरता, लेकिन चाहता हूँ कि मरने से पहले सारा भारत उस भयानक साधु को जान जाय । रास्ते पर मेरे दिमाग में सिर्फ एक बात चक्कर लगा रही थी कि भारत सरकार को सत्यता का पूरा पता चल जाय ।”

“मैं अवश्य ही श्री मित्रा के यहाँ लाऊँगा,” अशोक ने कहा—
“और तब हम तीनों मिल कर सेलाई के आश्रम में होनेवाले षड्यन्त्र का पता लगाने की तरकीब सोचेंगे और मेजर भण्डारी और उनके साथी के बारे में भी पता लगाने की चेष्टा करेंगे । जो कुछ काँगपू ने हम भारतीयों के साथ अत्याचार किये हैं, उसका बदला उसे अवश्य मिलेगा ।”

“भण्डारी मर चुका है, मुझे इसका विश्वास है”—जयन्त ने कहा ।

“तब काँगपू भी मरेगा ।” अशोक धीरे से, पर दृढ़तापूर्वक बोले ।

:०:

:०:

अशोक सान्याल उठ खड़े हुए—“डॉ० जयन्त, कभी-कभी मनुष्य अपने दिल की बात ठीक तरह से नहीं कह पाता ; लेकिन आप विश्वास रखिए कि जिस नरपशु ने आपके साथ यह व्यवहार किया है, उसके साथ न्याय करने की पूरी चेष्टा करूँगा ।”

यह तय करके कि वे प्रेमेन्द्र बाबू के साथ लौटेंगे, जासूस अशोक और सुन्दर डॉ० जयन्त की गाड़ी में सान्ताक्रूज हवाई अड्डे की तरफ चल दिये। सान्ताक्रूज पर उन का निजी छोटा-सा तेज-रफ्तार हवाई जहाज हमेशा रहता था। एरोड्रोम के मार्शल से चाबी लेकर उन्होंने गैरेज से अपना जहाज बाहर निकाला और बिना एक मिनट की देर किये जहाज को दिल्ली की तरफ उड़ा ले चले। कोई चार घण्टे की यात्रा के बाद उनका जहाज राजधानी के पालम अड्डे पर खड़ा था। अगले ही क्षण अशोक सान्याल और उनका सहकारी किराये की टैक्सी में श्री प्रेमेन्द्र मित्रा के बंगले को जाते हुए नज़र आये। जब गाड़ी 'जनपथ' पर स्थित श्री प्रेमेन्द्र के बंगले के फाटक में घुसी—तो अशोक बाबू और सुन्दर दोनों टैक्सी से कूद पड़े; क्योंकि बाहर कुछ भीड़ खड़ी थी और सीढ़ियों के ऊपर एक पुलिसमैन ड्यूटी दे रहा था। कोहनी से भीड़ हटा कर अशोक सीढ़ी पर चढ़े और पुलिसमैन को अपना कार्ड दिखा कर पूछा—“क्या मामला है?” सिपाही ने कार्ड पर ध्यान दिया। वह अशोक सान्याल के बारे में काफ़ी सुन चुका था; क्योंकि उन्होंने अक्सर केन्द्रीय खुफिया विभाग के साथ मिल कर काम किया था।

“बहुत खराब घटना है, मि० अशोक?” उसने कार्ड वापस करते हुए कहा, श्री प्रेमेन्द्र मित्रा की हत्या कर दी गई है।”

पुलिसमैन को वहीं छोड़, अशोक अन्दर के हॉल में घुसे। सबका चेहरा बदला हुआ था। सामने तीन व्यक्ति खड़े थे। उनमें से एक सी० आई० डी० के इन्स्पेक्टर रमेश बख्शी थे। अशोक को देखते ही इन्स्पेक्टर बख्शी अपने साथियों को छोड़ कर आगे बढ़ आये।

“बड़ी अजीब घटना है,” उसने कहा।

“ठीक-ठीक बताइए क्या हुआ है ?” अशोक ने पूछा ।

“करीब आधा घण्टे पहले लाइब्रेरी में श्री मित्रा मरे हुए पाये गए । यद्यपि कोई जख्म या लड़ाई-झगड़े का निशान नहीं मिला, तब भी डाक्टरों का विश्वास है कि यह मृत्यु स्वाभाविक मृत्यु नहीं है । श्री मित्रा को किसी ने मारा है और शायद दम घोंट कर । लेकिन उनके गले पर कोई निशान भी नहीं है ।”

“मैं उनकी लाश देखना चाहूँगा ।”

“मेरे साथ आइए । हम लोगों ने लाइब्रेरी की हर चीज उसी तरह रख दी है, जैसी हमें मिली थी । अभी उनका फोटो और नाप बगैरह लेना है ।”

इन्स्पेक्टर बख्शी और अशोक सान्याल की आपस में बहुत पटती थी । कई दफा दोनों ने मिल कर काम किया था; इसलिए उन्हें वहाँ देखकर बख्शी साहब को कुछ आश्चर्य नहीं हुआ । इन्स्पेक्टर अशोक को उस कमरे में ले गये, जहाँ हत्या हुई थी । वह एक छोटी-सी लाइब्रेरी और स्मोकिंग-रूम था । एक आदमी अलमारी के कागज देख रहा था और दूसरा कमरे का नक्शा बना रहा था । फर्श पर खिड़की के पास श्री मित्रा की लाश पड़ी थी; जिसका चेहरा नीचे था और जँगलियाँ ऐसे फैली हुई थी मानों वह फर्श पर रेंग कर आया हो । नीचे झुक कर अशोक ने मृत व्यक्ति को घुमा दिया, ताकि वह उसका चेहरा देख सकें । उस के मुँह पर नीले दाग थे और साफ मालूम पड़ता था कि दम घोंट कर मारा गया है । सिगार की तेज महक कमरे में फैल रही थी और इसमें मिली हुई किसी बढ़िया धूपबत्तीकी-सी खुशबू थी । फर्श पर कहीं-कहीं सिगार की राख के ढेर भी थे । खड़े हो कर अशोक ने इन्स्पेक्टर बख्शी से पूछा—“बख्शी साहब ! मैं देख रहा हूँ कि खिड़की की सिटखनी थोड़ी खुली है, क्या इसे अभी किसी ने खोला है ?”

“नहीं, अभी तक यहाँ की एक भी चीज नहीं छुई गई है।”

“तो यह साफ जाहिर है कि मरने से पहले या मारे जाने से पहले श्री मित्रा सिगार पी रहे थे”—अशोक बोले।

“हाँ मेज पर राख की प्लेट में एक अधजला सिगार मिला था, जो यह है।” इन्स्पेक्टर ने उन्हें दिखाते हुए कहा।

“सब से पहले किसको पता चला कि मित्रा बाबू मर गये हैं?”

“उनका सेक्रेटरी जब यह याद दिलाने आया कि खाना खाने का समय हो गया है, तब पता चला।”

“फर्श की दरी पर बहुत-सी राख पड़ी है।”

“हाँ जब कभी मित्रा साहब किसी गहरे सोच-विचार में होते थे, तो वह उठ कर कमरे में टहलने लगते थे और सिगार या सिग्रेट जो कुछ भी पीते थे, उसकी राख फर्श पर फेंकते जाते थे। मुझे उनके सेक्रेटरी से पता चला है कि वह अधिक सफाईपसन्द आदमी नहीं थे।”

अशोक बाबू ने सर हिलाया। कुछ क्षण उन्होंने दरी को ध्यानपूर्वक देखा, फिर अपनी जेब से सफेद कागज का टुकड़ा निकाल कर भूरी राख का एक छोटा ढेर, जो मृत व्यक्ति की लाश और खिड़की के बीच पड़ा था, उठा लिया। उसे घुटने पर रख कर अपने माइक्रोस्कोप की मदद से देखने लगे और फिर जिस जगह दरी पर वह राख पड़ी थी, उसे भी माइक्रोस्कोप से देखा।

इन्स्पेक्टर बल्शी दिलचस्पी से अशोक की कार्यवाही देखते रहे—“सिगार की राख है?” मुस्करा कर इन्स्पेक्टर ने पूछा।

“नहीं—यहाँ आगो!”

इन्स्पेक्टर बल्शी, अशोक के बगल में जा कर झुक गये और उनके कहने पर दरी को ध्यान से देखा। वहाँ दरी झुलस-सी गई थी।

“सिगार यहाँ गिरा है ?”—उसने पूछा ।

“मैं ऐसा नहीं सोचता—सूँधो,” अशोक ने कहा । इंस्पेक्टर ने अपने साथी को गौर से देखा फिर झुक कर सूँधने लगा—
“ऊँह—खुशबू ! इससे आप क्या मतलब लगाते हैं ?”

“यह तो मैं परसों बताऊँगा, जब इस राख की ध्यान से परीक्षा कर लूँगा ।” अशोक ने कहा ।

“जरूर-जरूर ! मैं यहाँ का इंचार्ज हूँ । आप इसे अवश्य ले जाइए और जल्दी मुझे इसके बारे में बताइए ।”

“परसो सुबह मैं आप से मिलूँगा”—अशोक ने कहा ।

“आज रात को या कल ही क्यों नहीं ?”

अशोक ने अपना हाथ बख्शी के कंधे पर रक्खा—“देखो, हम आपस में एक-दूसरे को समझते हैं । अगर मैं कहूँ कि आज रात मुझे फुरसत नहीं है, तो क्या तुम मान जाओगे और परसो तक इन्तजार न करोगे ?”

इंस्पेक्टर ने दलाल स्ट्रीट के जासूस की तरफ एक दफ़ा देखा, फिर कहा—“अच्छा मैं रुक जाऊँगा । मैं जानता हूँ कि तुम मुझे धोखा नहीं दोगे ।”

“नहीं मैं अवश्य आऊँगा और तब ब्योरेवार आप को सब कुछ बताऊँगा ।”

इसके बाद अशोक फौरन वहाँ पहुँचे, जहाँ सुन्दर और टैक्सी-ड्राइवर इन्तजार कर रहे थे, और ड्राइवर से तेजी से कहा—“हमें फौरन हवाई अड्डे पर ले चलो... एक मिनट भी खराब करने के वास्ते नहीं है !”

शहर के बाहर निकल कर गाड़ी बहुत तेजी से पालम एयरोड्रोम की तरफ भागने लगी; और आधे घण्टे से भी कम समय में वहाँ पर आ खड़ी हुई ।

बिना समय खराब किये अशोक फौरन मोटर से उतरे, और अपने जहाज में बैठ वापस बम्बई की तरफ उड़ चले । रात के १० बजते-बजते वे अपने सहकारी के साथ दोबारा डॉ० जयन्त के घर के सामने खड़े थे; लेकिन यह देख कर चौंक गये कि बाहरवाला बड़ा दरवाजा खुला है और उस के किवाड़ हवा से हिल रहे हैं !

“सुन्दर मेरे पीछे आओ और ड्राइवर तुम भी”—उन्होंने कहा ।

टार्च का बटन दबाते हुए अशोक बड़े हाल की तरफ बढ़े, लेकिन श्यामाबाई के बँधे हुए भारी शरीर से टकरा कर रुक गये, जो कि रास्ते में ही पड़ा था । उसकी देख-भाल के लिए शोफर को कह कर अशोक सीढ़ियाँ चढ़ने लगे, सुन्दर पीछे था ।

डॉक्टर जयन्त के कमरे में पहुँच कर अशोक ने दरवाजा खोल दिया—सामने की खुली खिड़की से ठंडी हवा का एक झोंका उन के मुँह पर लगा । टार्च की रोशनी सारे कमरे में घूम कर जयन्त के निश्चल शरीर पर रुक गई । वह तिरछा हो कर उसी पलंग पर पड़ा था और एक कटार की मूँठ छाती से निकली हुई दिखाई पड़ रही थी ।

अशोक उसकी बगल में बैठ गए और सुन्दर ने जल्दी से कमरे की बत्ती जला दी ।

धीरे-से अशोक ने कटार बाहर निकाल ली और ऐसा करते ही जयन्त की आँखें थोड़ी खुल गईं । पहले तो वह जासूस की तरफ घूरता रहा, फिर पहचान गया । “आखिर उन्होंने मुझे ले ही लिया... अशोक !... मैं चला !!” और उसने उठने की कोशिश की—अशोक ने सहारा दे कर उसे उठाया ।

“अशोक वादा करो, काँगपू को अवश्य पकड़ोगे... उसी ने यह सब किया है ।” और यह कहते ही जयन्त का सिर लुढ़क

गया । अशोक कुछ देर सोचते रहे कि अन्ततः दीपक बुझ ही गया ! यह प्रत्यक्ष था कि जयन्त के लिए अब कुछ किया नहीं जा सकता था । सफेद होंट कुछ कह रहे थे, जिसे सुनने के लिए अशोक ने कान नीचे कर लिए—“मैं देख रहा हूँ कि संसार खून से लाल हो रहा है । मैं देख रहा हूँ कि काँगपू तिब्बती लामाओं के आगे चल रहा है । मैं देख रहा हूँ कि सूरज ल्हासा के ऊपर चमक रहा है और काँगपू की आँखें मुझे घूर रही हैं... अशोक... बदला !”

जयन्त की आवाज खरखराहट में बदल गयी, मानों कोई कुएँ से बोल रहा हो... । एक मिनट बाद जयन्त फिर तेजी से बोला—“अशोक एक मरते हुए व्यक्ति से वादा करो !” और उसने अपना दायाँ हाथ बढ़ा दिया । अशोक ने उसे कस कर पकड़ लिया—“मैं वादा करता हूँ, डॉक्टर जयन्त कि जब तक काँगपू के साथ न्याय न करवा लूँगा, तब तक चैन न लूँगा ।”

जयन्त ने सिर हिलाया । फिर एक हिचकी... और उसका सारा बदन एकबारगी काँप उठा... सर लुढ़क गया—डॉक्टर जयन्त मर गया था !

:०:

:०:

:०:

उस रात बहुत देर तक अशोक सी० आई० डी० के अफसरों के साथ सलाह-मशविरा करते रहे । डॉक्टर जयन्त की लाश को पोस्टमार्टम के लिए भेज कर और श्यामाबाई से बात-चीत करके वह आफिस लौट आये थे । सुन्दर अशोक के मकान की दूसरी मंजिल पर चला गया था और सुबह वे भी वहीं पहुँच गए । बहुत से प्रश्न सुन्दर के मस्तिष्क में थे जो वह पूछना चाहता था, लेकिन जानता था कि अशोक अपने-आप समय पर उनका उत्तर देंगे । सुबह का नाश्ता

करनेके बाद अशोक अपनी कुर्सी रेडियो के पास खींच कर बैठ गये । कुछ देर तो वह मधुर हल्के संगीत को सुनते रहे; फिर ध्यान-मग्न हो गये ।

एकाएक चौंक कर अशोक ने कहा—“आज ही हम बम्बई छोड़ेंगे...हम ल्हासा जाएँगे !”

सुन्दर ने सर हिलाया ।

“जब मैंने डॉ॰ जयन्त की कहानी सुनी,” अशोक बोले—
“तो सचमुच मेरा यह विचार था कि वह किसी पागल पुजारी का शिकार बना था । तिब्बत के भयानक आश्रमों में लोगों ने इस प्रकार के अत्याचार भुगते हैं । यह अत्याचार बौद्ध भिक्षुओं अथवा महन्तों द्वारा किये गये थे; लेकिन श्री प्रेमेन्द्र मित्रा की हत्या से मुझे विश्वास हो गया है कि जिस काँगपू के विषय में जयन्त ने कहा था, वह कोई मामूली ताकत नहीं है ।”

“तो बाँस, आप का विचार है कि मित्रा बाबू की हत्या काँगपू के आदमियों द्वारा हुई है ?”

“हाँ, अच्छा मान लो कि जयन्त का कहना ठीक है और काँगपू पीली जातियों को भड़का कर भारत को जीतना चाहता है, तो पहला व्यक्ति जिसे वह अपने रास्ते से हटाना चाहेगा, मित्रा बाबू ही हैं । तिब्बत के बारे में शायद मित्रा बाबू इतना जानते थे, जितना भारत भर में सम्भवतः और कोई नहीं । उनकी हत्या भी ढँग से की गई है और हम जानते हैं कि काँगपू के आदमी दिल्ली और बम्बई में हैं और उन्होंने ही जयन्त को मारा है ।”

“अच्छा उन की हत्या कैसे हुई ?”

“प्रयोगशाला में उस राख का निरीक्षण करने के बाद हम लोगों ने रात ही में सारा केस तैयार कर डाला है । यह वह राख थी, जो कि प्रेमेन्द्र बाबू की लाइब्रेरी के फर्श पर से मैं उठा लाया था, जहाँ उन की मृत देह पड़ी थी । यह राख एक ऐसी खुशबूदार

लकड़ी की है, जिसके जलने से बिना किसी रंग का धुआँ निकलता है। इस धुएँ का एक झोंका मनुष्य की साँस लेनेवाली नली को बन्द कर देने के लिए काफी है, जिससे हृदय एक मिनट के अन्दर काम करना बन्द कर देता है। इसी तरह का एक मामला मैंने एक बार कलकत्ता में सुलझाया था।

“साफ जाहिर है कि प्रेमेन्द्र बाबू अपने कमरे में टहल रहे थे। खिड़की थोड़ी खुली थी। कमरा नीचे की मंजिल पर है, इसलिए हत्यारा खिड़की तक बड़ी आसानी से पहुँच सकता है।

“तो होता यह है कि वहाँ पहुँच कर वह इन्तजार करता है कि प्रेमेन्द्र बाबू की पीठ उस की तरफ हो जाय और तब वह उस चीज को जला कर दरी पर फेंक देता है और भाग जाता है। यदि कोई आदमी दरी पर कुछ जलता देखेगा, तो क्या करेगा ? जा कर देखेगा। यही प्रेमेन्द्र बाबू ने भी किया—धूपबत्ती जो बहुत जल्दी-जल्दी जल रही थी, लगभग छः व्यक्तियों का दम घोटने के लिए काफी थी। प्रेमेन्द्र बाबू ने झुक कर उसे देखा और इतने में स्वभावतः एक साँस ले ली। इसके बाद वहीं गिर कर मर गये।”

“उसके थोड़ी देर बाद अन्दर जानेवाले पर उसका कुछ प्रभाव नहीं होगा ?” सुन्दर ने पूछा।

“नहीं, इसके बाद तो वह सारी हवा में फैल जाती है और अपना प्रभाव खो देती है।”

“अच्छा, और इसके बाद हत्यारे क्या बम्बई में डॉ० जयन्त के घर पहुँच गये... शायद हवाई जहाज से !”

“हाँ बेशक, श्यामाबाई ने दरवाजे की घंटी बजते सुनी और खोलने गई। दो आदमी जो अँधेरे में खड़े थे, उस पर झपटे और मुँह में कपड़ा ठूँस कर हाथ-पैर बाँध दिये। हमारे वहाँ पहुँचने से थोड़ी देर पहले ही यह काण्ड हो चुका था। यद्यपि उस समय

अंधेरा था, फिर भी श्यामाबाई का कथन है कि वह दोनों इसी देश के वासी थे ।”

“दिल्ली से लौटते समय हम लोग उनके पीछे-पीछे ही पहुँचे !”

“हाँ, ...खुफिया पुलिस उनकी टोह में हैं और हो सकता है कि वे लोग पकड़े जायँ । जयन्त के जख्म के अन्दर चाकू घुसे रहने से ही वह जीवित रह सका क्योंकि इससे खून बह नहीं सका, नहीं तो उसी वक्त मर गया होता । हत्यारे हमारे आने से लगभग दस मिनट पहले भागे होंगे !”

यह कह कर अशोक सान्याल खड़े हो गये—“कैसी भयानक ताकत काम कर रही है ! सेलाई के उस आश्रम में एक शैतान की सेना क्रोध में उबाल खा रही है । मेजर भण्डारी और उस के साथी कहाँ हैं ? काँगपू कौन है ? इन सब सवालों के उत्तर देने का सिर्फ एक ही जरिया है, सुन्दर ! और वह यह कि उस काँगपू के दायरे में जबरदस्ती घुस जाओ ।”

“मैं तैयार हूँ, बाँस ।” सुन्दर ने कहा ।

“हम लोगों की जानें हथेली पर रहेंगी—एक दफे यदि काँगपू जान गया कि हमें उसकी हरकतों का पता चल गया है, तो हो सकता है कि हमारी वही दशा हो, जो प्रेमेन्द्र बाबू और डॉ० जयन्त की हुई है, हमें कमी केवल इस बात की है कि हमें काँगपू और उसकी शक्ति के बारे में बहुत कम पता है । मेरा इरादा डॉ० जयन्त से कुछ पूछने का था, लेकिन इसका मौका ही नहीं मिला । यहाँ की देख-भाल तो स्थानीय खुफिया-विभाग कर लेगा अथवा केन्द्रीय सुरक्षा-विभाग समझता रहेगा; किन्तु मैं और तुम आज ही शाम को बम्बई छोड़ देंगे और हमारा लक्ष्य होगा—ल्हासा के पास सेलाई का आश्रम ! हाँ, अच्छा उठो सुन्दर, जाने से पहले हमें बहुत कुछ करना है ।”

अशोक सान्याल और उनका सहकारी सुन्दर शीघ्र ही तैयार हो गये और शाम को टैक्सी पकड़ कर सान्ताक्रूज़ हवाई-अड्डे पर जा पहुँचे । रास्ते में ही तै हो चुका था कि वे एयर-इण्डिया के जहाज द्वारा कलकत्ता जायेंगे और आगे की यात्रा रेल द्वारा होगी । अतः योजनानुसार वे दोनों अगले दिन सबेरे ही कलकत्ता जा पहुँचे । छोटी लाइन की रेल द्वारा पहाड़ी सफर तथा दार्जिलिंग पहुँच कर लामा (बौद्ध भिक्षु) का वेश बनाना—और दार्जिलिंग से किसी प्रकार सीमा पार करके तिब्बत में पहुँचना—और फिर उस रहस्यमय देश में पहुँच कर जो-जो मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा, यह सोच कर सुन्दर को सिहरन-सी हो गई । अशोक बाबू चूँकि बहुभाषी थे, अतः उन्हें विश्वास था कि तिब्बती भाषा और वहाँ के रहन-सहन की काफी जानकारी रहने से कोई उन पर सन्देह नहीं कर सकेगा ।

दार्जिलिंग पहुँच कर उन्होंने वहाँ के पुलिस कमिश्नर से बहुत देर तक बात की और अगले दिन सबेरे दोनों तिब्बत की आखिरी मंजिल तय करने लगे ।

पुलिस हेडक्वार्टर के मेक-अप विशेषज्ञ पुलिन बाबू ने घंटों मेहनत करके उन दोनों का चेहरा एक दम बदल दिया था । पुलिन सरकार भारत के सबसे उत्तम वेश बदलनेवालों में से एक थे । उन्होंने दो घंटे में ही, अशोक और सुन्दर दो तगड़े जवान भारतीयों को, दो वृद्ध बर्फ में झुलसे चेहरेवाले लामा साधुओं में बदल दिया !

“यहाँ से ल्हासा तीन सौ अस्सी मील है, सुन्दर !” अशोक बाबू ने दार्जिलिंग से चलते हुए कहा—“और सारा मार्ग हमें पैदल ही तय करना है । हम लोग दो घुमक्कड़ लामा हैं और इतने गरीब हैं कि खच्चर या घोड़ा भी नहीं ले सकते ।”

कपड़ों के नीचे दोनों एक-एक रिवाल्वर और कारतूसों की पेटी पहने हुए थे । कमर पर बँधे हुए गठ्ठर में काफी खाना और

फालतू कारतूस भरे थे। वह बराबर बढ़ते चले गये और दार्जिलिंग छोड़ने के सातवें दिन शाम को वह लोग 'जलापला' की चोटी पर चढ़ गये, जहाँ से तिब्बत की सीमा को पार करती हुई कई पगडंडियाँ तिब्बत को जाती थी। कोहरे से ढँके हुए शहर को देख कर सुन्दर की उत्सुकता बढ़ गई—यही वह तिब्बत है, जो रहस्य से भरा हुआ है... और जहाँ कोई जा नहीं सकता! उत्तर-पूर्व में एक मीनार की तरह चुमुलारी की चोटी दिखाई पड़ रही थी।

काफी नीचे 'कंजुत' का मठ दिखाई पड़ रहा था और उसके नीचे चुम्बी और ल्हासा को जानेवाली सड़कें थीं।

“हमें बढ़ते रहना चाहिए”—अशोक ने कहा—“और कोई ऐसा स्थान ढूँढ़ना चाहिए, जहाँ रात को सोया जा सके, क्योंकि थोड़ी देर में ही रात हो जायगी।”

उन लोगों ने घाटी में उतरना शुरू कर दिया। अन्धेरा बढ़ रहा था और ठंडी तेज़ हवा सर्र-सर्र चल रही थी। सड़क के मोड़ पर कुछ हट कर एक पत्थर के ढोंकों का मकान बना हुआ था, जो देखने से सराय मालूम पड़ता था।

“रात को हम लोग यहीं रुकेंगे, सुन्दर!”

उस झोपड़े के पास पहुँच कर अशोक बाबू ने देखा कि दरवाजे पर एक औरत खड़ी हुई उन्हें घूर रही है। वह एक भारी काला कम्बल ओढ़े थी और पैर में मोटे जूते पहने थी। उसने अन्दर किसी पुरुष से कुछ कहा और तभी एक भद्दी और टेढ़ी-भोंड़ी सूरत का आदमी बाहर आया।

“आप क्या चाहते हैं, भाइयो!”

“खाना और रात भर के लिए जगह,” उन्होंने उत्तर दिया।

औरत और उस-पुरुष ने एक दूसरे की तरफ देखा—“आप कहाँ से आ रहे हैं?”

“गेटाङ्ग से !”—जासूस ने कहा—“लेकिन हम से यह सवाल क्यों ? क्या दो पवित्र लामा, जो ल्हासा जा रहे हैं, इस तरह बाहर ठंडक में मार डाले जाएँगे । हम खाना और स्थान चाहते हैं और उसके दाम देंगे, चाहे हम उसे खुशी से न दे सकें ।”

“आइए, अन्दर चले आइए, भाइयो ! जो कुछ इस में है, आप के लिए हाजिर हैं ।” पुरुष ने धीमे से उत्तर दिया ।

घूम कर वह उन्हें एक गन्दे घुएँ से भरे हुए कमरे में ले गया । एक अंगीठी में आग जल रही थी और एक टूटी हुई मेज पर दो पुजारी लबादा ओढ़े बैठे थे और गर्म-गर्म काढ़े जैसी कोई चीज पी रहे थे । अशोक बाबू और सुन्दर अंगीठी के पास पहुँचे और हाथ फैला कर सेंकने लगे । अपने ऊनी टोपे के नीचे से अशोक ने उन दोनों पुजारियों को देखा—दोनों लम्बे थे और उन का चेहरा कठोर और तपा हुआ था । अपना काढ़ा खतम करके कुछ देर तो वे आपस में बात करते रहे, फिर एक उठ कर अशोक और सुन्दर के पास पहुँच गया—“नमस्कार भाइयो !” उसने कहा ।

“नमस्कार भाई !—अशोक बाबू ने उत्तर दिया ।

“यह बहुत खराब स्थान है,” उसने कहा—“और पवित्र लामा के लिए और भी खराब है । पेटोङ्ग मठ जहाँ हम जा रहे हैं, यहाँ से थोड़ी ही दूर है और वहाँ आप इससे अच्छी जगह पायेंगे, यदि आप वहाँ तक चले चले तो ।”

उसकी काली तेज आँखें बराबर जासूस को घूरती रहीं ।

“धन्यवाद भाई !—लेकिन मैं और मेरा साथी बराबर चलते रहने से इतना थक गये हैं कि आगे बढ़ने से मजबूर हैं ! अब हम यहाँ ही आराम करेंगे ।”

“तो तुम ऐसी खराब जगह पसन्द करते हो.... तुम, जो कि ल्हासा तक यात्रा कर रहे थे !”—उसकी आवाज से कुछ मज्जाक का आभास था ।

“लहासा तक !”—अशोक की आवाज तेज थी—“हाँ भाई, तुम्हें ठीक पता है ।”

:०:

:०:

:०:

उस पुजारी के पतले होठों से एक मुस्कराहट फूट निकली—
“नहीं, यह बात नहीं है, लेकिन यह सब रास्ते लहासा को जाते हैं ।”

“सच बात है”—अशोक सान्याल ने कहा—“इस सड़क पर न जाने कितने यात्री रोज गुजरते हैं; लेकिन क्या यहाँ से ऐसी छोटी-छोटी पगडंडियाँ नहीं निकलतीं जो पता नहीं कहाँ-कहाँ जाती हैं ?”

“तो भाई, क्या तुम किसी दूरस्थ आश्रम को जा रहे हो ?”
उसकी गड़ढे में धँसी हुई आँखें अशोक के चेहरे पर जमी हुई थीं और मालूम पड़ता था कि वे उसकी परीक्षा कर रही हैं ।

“अच्छा बहुत हो गया,” अशोक ने कहा—“क्या पेटोङ्ग के मठ के एक मामूली पुजारी को यह अधिकार है कि वह पवित्र लामाओं से उनकी यात्रा का वर्णन पूछे ? हमारी जहाँ इच्छा होती है हम जाते हैं, क्या इतना काफी नहीं ? मेरे मित्र, अपनी जबान को बन्द कर के अपनी जगह पर बैठने की कृपा करो । समझे... इस समय सब से आवश्यक काम तो हमारे लिये यह है कि पहले पेट की आग को गर्म-ताजा भोजन से शान्त करें—फिर अपने शरीर को अँगीठी से सेंकें । समझे.... !”

अशोक ने मुड़ कर फिर हाथ सेंकना शुरू कर दिया । वह आदमी अशोक को कुछ देर तक घूरता रहा, फिर जहाँ उस का साथी बैठा था, वहीं जा कर खामोश बैठ गया ।

औरत कमरे में घुस आई और एक मेज पर दो प्यालों में गर्म-गर्म दलिया रख दिया । अशोक और सुन्दर लपक कर उसे बड़े चाव से खाने लगे ।

अशोक इस तरह बैठे थे, जिसमें कि अपने बगल में बैठे हुए दोनों पुजारियों को देखा जा सके । “सम्भवतः उस पुजारी को कुछ शक हो गया है, सुन्दर !” जासूस ने दबी आवाज में कहा—“और यदि उसे पता चल गया कि हम वास्तव में वे नहीं हैं, जो दिखाई पड़ते हैं, तो अपने को मरा समझो ।”

“लेकिन उसे शक क्यों हुआ... ?”

“तिब्बत में किसी भी विदेशी के प्रवेश की मनाही है और यहाँ पर ये पुजारी ही सब कुछ हैं । यही सब देख-भाल करते हैं; इसलिये जो भी सीमा पार करके यहाँ आता, उसे ये शक की निगाह से देखते हैं, जब तक कि वह अपने को यहीं का निवासी सिद्ध न कर दे ।”

थोड़ी देर रुक कर उन्होंने फिर कहा—“तुम शायद आश्चर्य करते होगे कि मैंने उस के साथ यह विचित्र व्यवहार क्यों किया ! उसकी बातों का चिकना-चुपड़ा उत्तर दे देने से सम्भवतः उसे कोई शक न होता । लेकिन जिसे कुछ छिपाना नहीं चाहिए, क्या उसके लिए यह आवश्यक है कि वह प्रत्येक अपरिचित के सब प्रश्नों का उत्तर दे दे ?”

सुन्दर की समझ में सब कुछ आ गया—“यदि वह हम से फिर पेटोङ्ग के मठ में चलने को कहता है तो ?”

“तब हम चले चलेंगे । यह हमने उन्हें बता दिया है कि इसके लिये हम तैयार नहीं हैं, लेकिन जिद्द करने से उन्हें और शक हो जायगा ।”

अपना-अपना दलिया खा चुकने पर उन की क्षुधा शान्त हो गई । कुर्सियाँ अंगीठी की तरफ घुमा कर वे लोग बैठ गए । लम्बा पुजारी खड़ा हुआ और फिर इन की तरफ चला आया ।

“भाइयो ! तुम लोग खाना खा चुके हो और अब तक तुम्हारे बदन की सर्दी भी दूर हो गई होगी । हम लोग पेटोङ्ग के मठ को जाने के लिए तैयार हैं और एक बार आप से फिर कहते हैं कि कृपया हमारे साथ वहाँ तक चले चलिए !”

“रात को इस कड़ाके की सर्दी में बाहर जाने से हम बचना चाहते थे,” अशोक ने कहा; फिर उठते हुए बोले—“लेकिन न करना भी असम्भव है, इसलिए हम चलेंगे ।”

“ठीक है”—और उस पुजारी ने धूम कर कहा—“लालटेन लाओ ।”

वही व्यक्ति, जो अशोक बाबू को बाहर मिला था, एक पुरानी गंदी-सी लालटेन ल कर आया । जासूस और उसके सहकारी ने अपने कपड़े ठीक किये और उस लम्बे पुजारी के पीछे-पीछे चलने लगे । अशोक ने एक सिक्का मेज़ पर फेंक दिया, जो कि अपने और सुन्दर दोनों के खाने के लिए काफी था । आवाज सुन कर वह पुजारी लौट पड़ा और झुंझला कर बोला—“तो क्या पवित्र लामाओं को इन कुत्तों को पैसे भी देने पड़ेंगे ?”

हाथ के पंजे को फैला कर उसने वह सिक्का उठाना चाहा, लेकिन जासूस के हाथ ने उस की कलाई पकड़ ली ।

“यह तो छोटा सिक्का है”—अशोक ने पूछा—“और कुत्तों को भी जीवित रखना होता है ।”

“यह दलाई लामा की शान के विरुद्ध है कि उनके नौकर अपने खाने का पैसा दें ।”

“पैसे मैं दे रहा हूँ, तुम नहीं,” अशोक ने कहा—“खैर चलो, नहीं तो यहीं रात बीत जायगी ।”

उसकी कलाई अशोक ने छोड़ दी और दरवाज़ की तरफ बढ़े—उस पुजारी ने जासूस की तरफ ऐसी कठोर दृष्टि से देखा, जिससे

उन्हें आनेवाले खतरे का आभास हो गया । “सावधानी से चलो और चौकन्ना रहना !” अशोक ने धीरे से सुन्दर को कहा ।

:०:

:०:

:०:

मठ तक की यात्रा बिना किसी दुर्घटना के पूरी हो गई । सराय-वाला सबसे आगे हो लिया और बाकी सब एक के पीछे एक हो कर ऊँचे-नीचे पठारी रास्ते पर चलने लगे । इस तरह करीब घंटा भर चलने के बाद एक दीवार की छाया दिखाई पड़ी । पुजारी के कहने पर सरायवाला वापस लौट गया और पुजारी ने दीवार में लगे एक लकड़ी के दरवाजे को जोरों से खटखटाया । अन्दर से किसी के चलने की आवाज आई और धीमा प्रकाश किवाड़ की दरार से दिखाई पड़ा ।

“कौन है ?”

“मैं हूँ—कालादुलूई !”—पुजारी ने उत्तर दिया ।

किसी ने साँकल हटाई और दरवाजा आवाज करता हुआ खुल गया । एक लालटेन से इन चारों के चेहरे पर प्रकाश डाला गया और उसके पीछे लाल टोपा लगाये एक और पुजारी खड़ा था—“तुम अकेले नहीं हो !”

“नहीं, दो घुमक्कड़ लामाओं को लाया हूँ । रात भर के लिए जगह चाहते हैं”—कालादुलूई ने उत्तर दिया—“दरवाजा बन्द करो और हमें रास्ता दिखाओ ।”

लालटेनवाले उस व्यक्ति ने दरवाजा बन्द कर दिया और आगे-आगे चलने लगा—वह एक आँगन पार कर रहा था । उसे पार कर वह एक दरवाजे के सामने रुक गया, जिस पर पर्दा टंगा था । पर्दा हटा कर उसने धक्का दिया और दरवाजा खुल गया । अशोक और सुन्दर ने एक गलियारा देखा, जिसमें लैम्प की फीकी-सी रोशनी फैली थी ।

“मेरे पीछे आओ”—कालादुलुई ने कहा और उस गलियारे से हो कर वह अशोक और सुन्दर को एक बड़े कमरे में ले गया, जो पत्थर का बना था—“यहीं इन्तजार करो, तब तक मैं बड़े महन्त को तुम्हारे आने की सूचना देता हूँ।” जासूस और सुन्दर को वहीं छोड़ कर वह चला गया।

“जितना स्वाभाविक तुम बन सकते हो, उतना बनने की चेष्टा करो सुन्दर ! यहाँ की दीवारों तक को आँख और कान हैं।”

अशोक कमरे में चहलकदमी करने लगे और कुछ सोचते भी रहे। मिनटों बीत गये पर कोई नहीं आया। सब कुछ शान्त था। सुन्दर को लग रहा था कि कोई उसे देख रहा है और कुछ देर बाद उसे विश्वास हो गया।

तभी कालादुलुई का लम्बा-पतला शरीर अन्दर आया—“महन्त आपसे बात करना चाहते हैं”—उसकी तेज आवाज कमरे में गूँज गई।

अशोक और सुन्दर उसके पीछे-पीछे गलियारा पार करके एक पत्थर का जीना चढ़ गये और अचानक एक बड़े हॉल में पहुँचे, जो सम्भवतः मन्दिर था। दोनों तरफ पुजारियों की कतार खड़ी थी। ये पुजारी बिल्कुल शान्त और चुपचाप खड़े थे और यह कतार एक लकड़ी के मंच तक चली गई थी, जहाँ लाल कपड़े पहने एक दुबला-पतला व्यक्ति बैठा था और उसके पीछे ही एक विशाल बुद्ध प्रतिमा खड़ी थी।

कालादुलुई ने झुक कर प्रणाम किया और फिर अशोक और सुन्दर को आगे कर दिया। काफी देर तक तो महन्त बिना कुछ बोले ही उन दोनों को देखता रहा; ऊपर से नीचे तक—फिर तेज पैनी आवाज में बोला—“तुम लोग कहाँ से आ रहे हो ? क्या हमारे देश की सीमा के उस पार से आये हो ?”

उसकी आवाज में कुछ सन्देह था, जो कि अशोक और सुन्दर दोनों से छिपा न रह सका ।

“अगर हम यह उत्तर दें कि हम ल्हासा जा रहे हैं या यह कहें कि हम अपने मठ में एकान्तपूर्वक रहना चाहते हैं, तो क्या यह काफी नहीं ?” अशोक ने बिना किसी झिझक के उत्तर दिया—“इस मठ की तरह छोटे मठों के महन्तों को पवित्र लामाओं से प्रश्न पूछने का अधिकार कब से मिला है ?”

सब लोग काँप उठे । कुछ के कपड़े सरसराये, स्वयं महन्त कुछ देर भौंचक्का-सा देखता रहा । फिर चिल्ला कर बोला—

“तुम पूछते हो किस अधिकार से ? तुम उस जगह खड़े हो कर मुझसे अधिकार पूछ रहे हो ! जिद्दी, धर्मभ्रष्ट पुजारी मेरे सवाल का साफ़-साफ़ उत्तर दो, नहीं तो मैं तुम्हारी जबान निकलवा लूँगा ।”

“क्यों पेटोंग के महन्त ! तुम हमारी जबान उखाड़ने की बात कहते हो ?” अशोक ने कहा—“लेकिन, तुम शायद यह नहीं जानते कि जिससे तुम बात कर रहे हो, उसका यदि तुमने जरा भी नुकसान किया, तो तुम्हारी क्या दशा होगी !”

अशोक सान्याल बराबर झूठ कह रहे थे । उन्हें इस का बखूबी आभास था कि वह और सुन्दर दोनों गहरे खतरे में हैं । यह कह देना कि वह ल्हासा की यात्रा कर रहे हैं, बहुत ही आसान था; लेकिन यह कहने से वह जिद्दी क्रूर महन्त न जाने कितने सवाल और पूछ डालता, जिसका उत्तर देना दो अजनबी भारतीयों के लिए बहुत ही मुश्किल होता । सराय में कालादुर्लुई का प्रश्न और यहाँ महन्त का प्रश्न बिना किसी मतलब के नहीं; परन्तु इस के पीछे बहुत गहरा भेद छिपा है ।

महन्त ने आगे झुक कर अशोक को नवीन उत्सुकता से देखा—
 “तुम शायद किसी गुप्त कार्य के लिए निकले हो !” उसने धीरे से पूछा ।

“पवित्र लामा अपने देश की यात्रा निजी स्वार्थ के लिए कब करते हैं ?” अशोक ने उत्तर दिया ।

उत्तर में ‘हाँ’ कह कर महन्त ने अपने पतले हाथों से ताली बजाई और अशोक ने देखा कि सब पुजारी झुक कर बाहर चले गये और कमरे में सिर्फ महन्त, अशोक, सुन्दर और कालादुर्लुई रह गये । जब सब लोग बाहर चले गये, तब महन्त ने आगे झुक कर कहा—
 “बहुत दिनों से हम सीमा पर पहरा रख रहे हैं और आज तक कोई भी बाहर का आदमी इधर से नहीं जा सका है । अगर तुम जो कुछ दिखाई पड़ रहे हो, वह नहीं होते तो उस भयंकर काल-कोठरी में, जो कि ठीक इसके नीचे है, मार डाले जाते । लेकिन तुम किसी गुप्त कार्यवश जा रहे हो और यह मैं विश्वास करता हूँ जिस तरह से तुमने बात की है, उस तरह सिर्फ उसके नौकर ही कर सकते हैं ।”

“जिस तरह तुमने बात की है, उस तरह सिर्फ उसके नौकर ही कर सकते हैं !”—यह सुन कर सुन्दर की तो साँस रुक गई ।

“तुम्हारे काम के विषय में अब मैं तुमसे कुछ नहीं पूछूँगा”—
 महन्त ने कहा—“अब वह मेरा काम नहीं । तुम मुझे सिर्फ उसका चिह्न दिखा दो और बाद में सोने के लिये आराम-कमरे में जाओ ।

“तुम्हारा मतलब.....!” अशोक सान्याल ने पूछा, किन्तु इसका उत्तर उन्हें मालूम था ।

“और किससे मेरा मतलब हो सकता है—सिर्फ एक ही तो है—वह भगवान् तथागत का प्यारा—तिब्बत से बाहरी संसार का काल ! ..महान् शक्तिशाली काँगपू !!... अब देर न करो मुझे वह चिह्न दिखाओ, जो चिह्न तुम्हें काँगपू ने दिया है ।”

:०:

:०:

:०:

कमरे में कुछ क्षण पूर्ण स्तब्धता रही । सुन्दर की मुट्ठी बँध गई थी और वह इंतजार में था कि कब बाँस का इशारा मिले और

वह उन पर झपट कर अपने निकलने का रास्ता बनाये । लेकिन सफलता की सम्भावना बहुत कम थी—और यह निश्चय था कि उन्हें उस मठ में आना था । यदि वे अपनी मर्जी से वहाँ न आते, तो इसमें कोई सन्देह नहीं था कि वे अपनी यात्रा पूरी नहीं कर सकते थे और रात को सोते समय उसी सराय में उन दोनों पुजारियों के हाथों मार डाले जाते; क्योंकि वह भी रहस्यमय काँगपू के सेवक थे ।

और अब सुन्दर को पक्का विश्वास हो गया कि जिस काँगपू के विषय में डॉ० जयन्त ने कहा था, वह वास्तव में बड़ी ताकत है । अपने ऊनी कनटोप के नीचे से सुन्दर जासूस को देख रहा था और कुछ भी करने-कराने के लिये तैयार था ।

कालादुलुई उनकी तरफ एक कदम बढ़ा । उसके चेहरे पर स्पष्टतया सन्देह झलक रहा था । महन्त के चेहरे पर अब भी मुस्कराहट थी । पीछे अन्धकार में किसी के फुसफुसाने की आवाज आयी और सुन्दर को पता लग गया कि उस जगह कुछ और पुजारी भी खड़े इंतजार कर रहे हैं ।

“मैं तुमसे आखिरी बार पूछता हूँ”—महन्त की आवाज तीखी थी—“वह चिह्न मुझे फौरन दिखा दो, जिससे मैं जान सकूँ कि तुम उसका काम कर रहे हो ।”

“तुम्हें इसका अधिकार है ?”—जासूस ने कहा—“कि जो चिह्न मैं लिये हूँ, तुम्हें अवश्य दिखाऊँ !”

अपने कपड़ों को नीचे हाथ डाल कर अशोक महन्त की तरफ बढ़े ताकि सिर्फ महन्त ही वह चीज देख सके जो वह बाहर निकाल रहे थे । तब अचानक उछल कर वह मंच पर पहुँच गये और महन्त के कपड़े पकड़ लिये और उसे कुर्सी से खींच लिया । बाएँ हाथ से उसे मजबूती से पकड़े हुए थे और दायें हाथ जब कपड़े के नीचे से बाहर आया, तो उसमें एक ऑटोमेटिक रिवाल्वर था !

कालादुलुई आगे बढ़ा और पीछे से नंगे पैर पुजारियों के चलने की आवाज भी आई ।

“वापस जाओ !”—अशोक की आवाज गुँज गई—“नहीं तो मैं तुम्हारे महन्त को गोली मार दूँगा ।”

भीड़ रुक गई । कालादुलुई का एक पैर मंच पर था; वह वह वही का वहीं रह गया । काले कपड़े पहने हुए पुजारी ऐसे खड़े रह गये, मानों उन्हें काठ मार गया हो । उनके चेहरे बहुत भयानक लग रहे थे ।

उन लोगों ने उस मन्दिर में बहुत-से विचित्र दृश्य देखे थे; लेकिन उतना भयानक नहीं था, जबकि उनका महन्त खुद मौत के चक्कर में पड़ गया हो !

“सुन्दर, मेरे पास आओ !”—अशोक ने कहा और पिस्तौल हाथ में लेकर सुन्दर कूद कर मंच पर चढ़ गया और अपने बाँस के बगल में खड़ा हो गया ।

“पेटोंग के महन्त ! मेरा चिह्न देख लो; और अगर अच्छी तरह देखना चाहते हो, तो अपने पुजारियों से कहो कि ज़रा एक कदम आगे बढ़ आयें ।”

महन्त का खून सूख गया था । उसके दाँत बजने लगे और डर से सारा बदन काँपने लगा था । उसकी पसलियों में अशोक का पिस्तौल चुभ रहा था और जासूस की आँखों में उसने एक ठोस निश्चय की झलक देखी ।

“पेटोंग के पुजारियो...सुनो !” भीड़ की तरफ मुड़ कर अशोक ने कहा—“हम कौन हैं और कौन नहीं, यह जानना न तुम्हारा काम है और न तुम्हारे महन्त का । हम रात के अन्धकार से आये थे, उसी अन्धकार में जा रहे हैं और अपनी रक्षा के लिये इस महन्त को भी ले जाएँगे । जब तक हम इस मठ के बाहर न चले जायें; अगर तुम में से किसी ने भी आगे बढ़ने का विचार किया, तो तुम्हारा महन्त इतनी जल्दी मरेगा, जितनी जल्दी उसने कभी सोचा भी न होगा ।”

पुजारी शान्त खड़े रहे; लेकिन कालादुलुई की आँखें जलने लगीं । झुक कर उसने कहा—“ऐ पेटोंग के महान् महन्त ! सिर्फ

तुम आज्ञा मात्र दो और मैं इसका बदला लेने के लिए सब पुजारियों को तैयार कर दूँगा ।”

अशोक की पकड़ से महन्त काँप गया था, बोला—“तो क्या तुम यह चाहते हो, कालादुलुई ! कि बुद्ध के निकट ही मेरी मृत्यु हो ?”

“अपनी पिस्तौल उसकी कमर से लगा दो, सुन्दर !”—अशोक ने कहा—“और उससे कहो कि रास्ता दिखाये ।”

सुन्दर ने भी वैसा ही किया और इस बार अशोक के कहने के मुताबिक कालादुलुई भी चलने लगा । सुन्दर अपनी पिस्तौल उसकी कमर से लगाये रहा और उसके पीछे अशोक महन्त को घसीटते हुए चले ।

वहाँ जितने पुजारी मौजूद थे, उनमें से किसी ने भी उन का रास्ता रोकने की कोशिश नहीं की ।

सीढ़ी से नीचे उतर कर उन लोगों ने गलियारा पार किया, फिर दरवाजे से बाहर निकल आए ।

“कालादुलुई अब तुम वापस लौटो और उस दरवाजे में ताला लगा दो, जिससे कोई निकलने न पाये ।” अशोक ने कहा ।

“और हमारे महन्त का क्या होगा ?” पुजारी ने पूछा ।

“अच्छा, तो आप भी अब तक प्रश्न करने का विचार दबाये हुए थे ?... चले जाओ, तुम्हारा महन्त हमारे साथ रहेगा”—हँसते हुए अशोक ने कहा ।

कालादुलुई दरवाजे की तरफ बढ़ा और चौखट पर जाँकर रुक गया, अन्धेरे से उसकी आवाज आई—“तुम कौन हो यह मैं नहीं जानता; लेकिन याद रखो कि काँगपू तक खबर पहुँच गई है कि तुमने पेटोङ्ग के मठ में उत्पात मचाया है । जब तुमने सीमा पार की, तभी यह हम लोग समझ गये थे कि तुम भगवान् तथागत के सच्चे भक्त नहीं हो और आज के काण्ड से यह और भी सिद्ध हो हो गया । लेकिन सुबह होने से पहले काँगपू का हाथ तुम्हारे लिए फैल जायगा और तुम कुत्ते की मौत मरोगे ।” और दरवाजा खटाक्-से बन्द हो गया, कुंडी लग गई और कालादुलुई चला गया ।

करीब सौ गज अशोक और सुन्दर अन्धेरे में महन्त को लिए हुए बढ़े । डर के मारे महन्त अधमरा-सा हो गया था । वह सोच रहा था कि बुद्ध की मूर्ति के नीचे से उस मठ के अन्दर से निकाल लाया जाना बड़ी बात है और अगर उसे स्मरण होता कि न जाने कितने निरीह प्राणियों को, उसने बुद्ध की मूर्ति के आगे सता-सता कर मार डाला है, तो उसकी समझ में यह आता कि अशोक और सुन्दर उन्हीं का बदला लेने आये हैं ।

एकाएक दोनों जासूस रुक गए और अशोक ने महन्त से कहा—
“मैं हत्यारा नहीं हूँ, नही तो आज की रात संसार में एक पापी कम हो जाता । वापस लौट जाओ और जा कर दरवाजा जोर से खट-खटाना । कहीं ऐसा न हो कि कालादुलुई जा कर तुम्हारी कुर्सी पर बैठ गया हो !”

छूटकारे की साँस ले कर महन्त वापस मुड़ा और अन्धेरे में छिप गया । कुछ देर तक दोनों ध्यान से उसके पैरों की आवाज़ सुनते रहे ।

“मुझे विश्वास नहीं है कि वह अन्दर जायेगा,”—अशोक ने कहा—“मुझे लगा कि कालादुलुई उस मंच को लालच भरी निगाह से देख रहा था और शायद इस मठ में महन्त के बाद सबसे शक्तिशाली भी वही है ।”

“हाँ, उस भीड़ को आगे बढ़ाने के लिए वह तैयार था, ताकि महन्त की जान चली जाती !”—सुन्दर ने कहा ।

“हाँ आओ, शुरुआत अच्छी है । लेकिन सुबह तक हमें यहाँ से काफी दूर निकल जाना चाहिए ।”

ऊँचे-नीचे पथरीले रास्ते पर वे दोनों तेजी से चलने लगे और एकाएक उस सड़क पर पहुँच गये, जो जलापला से आती थी । तेजी से चलने के कारण उन्हें ठंड भी अधिक नहीं सता रही थी ।

“कालादुलुई के आखिरी वाक्यों का आप क्या मतलब लगाते हैं, बाँस ?” सुन्दर ने पूछा—“उसने कहा था कि सुबह होने से पहले काँगू का हाथ फैलेगा और हमें पकड़ लेगा । मेरे ख्याल से तो सिर्फ डराने मात्र के लिए था ।”

“नहीं, ऐसी बात नहीं है, सुन्दर !” अशोक ने गम्भीर स्वर में उत्तर दिया—“हमने देख लिया है कि सीमा पर कितना कड़ा पहरा रहता है और दुर्भाग्यवश पहले पहले ही हमारी काँगपू के सेवकों से झड़प हो गई। लेकिन जो रास्ता हमने अपनाया है, वही सुरक्षित भी है। यह तो साफ ज़ाहिर है कि कालादुलुई इसीलिए वहाँ था, जिससे कि वह प्रत्येक अनजान नवागन्तुक से सवाल कर सके और कोई भी विदेशी उसके प्रश्नों का ठीक-ठीक उत्तर देकर तिब्बत के भीतर घुस नहीं सकता था। और यदि हम भी पहले प्रश्न का उत्तर सीधे से दे देते, तो बड़ी मुश्किल में पड़ जाते।”

“और अब हम तिब्बत में पहुँच गये हैं और सीमा पार कर चुके हैं !”

अशोक ने सुन्दर के कंधे पर हाथ रक्खा—“तुम कहते हो कि तिब्बत में पहुँच गये हैं; लेकिन अब हम वापस नहीं लौट सकते, यदि हम चाहें भी तो ! जीवित हम कभी सीमा को पार नहीं कर सकते—कालादुलुई को धमकी झूठी नहीं है और अगर सुबह तक कुछ नहीं हुआ, तो हम लोग सड़क छोड़ देंगे और सारा दिन इन्ही पहाड़ी चट्टानों की आड़ में व्यतीत करने की चेष्टा करेंगे।”

वे दोनों बराबर सड़क पर बढ़े जा रहे थे। सड़क उन्हें पहाड़ी के नीचे ले जा रही थी। उनके सामने तिब्बत का विशाल पठारी देश था, जिसके रहस्य बौद्धमत के पर्दे के पीछे छिपे हैं। उनके पीछे ऐसी आड़ थी, जिसे वह कभी पार नहीं कर सकते और उनके चारों तरफ अन्धकार में छिपी हुई थी काँगपू की भयानक शक्ति, जो कि उन लोगों को बराबर अपने पास खींच रही थी ! अन्ततः पहाड़ी पर उन्हें एक गुफा मिल गई, जो काफी सुरक्षित थी।

“थोड़ा सो लो सुन्दर,” अशोक सान्याल ने कहा—“मैं देखता रहूँगा।”

सुन्दर लेट गया और फौरन सो गया। अपने कपड़े पहने-पहने वह गठरी-सा बन कर लेटा था और अशोक एक चट्टान पर बैठ गये और पत्थर की दीवार से टेक लगा ली—एक बार उठ कर उन्होंने

अपना लबादा उतारा और सोते हुए सुन्दर को ओढ़ा दिया और फिर उसी जगह बैठ गये । आँखें सतर्क थीं और दिमाग में वही सब घटनाएँ घूम रही थीं ।

दोपहर बाद कहीं सुन्दर सो कर उठा । सूरज पहाड़ी की ओट में जा रहा था और चारों तरफ पूर्णतया निस्तब्धता थी ।

“कुछ बात नहीं हुई !” अशोक ने कहा—“उस तरफ ध्यान से देखो, तो तुम्हें एक झोंपड़ा दिखाई पड़ेगा । सारा दिन मैं उसे ही देखता रहा हूँ । मुझे सिर्फ एक व्यक्ति चलता नजर आया है । हमारे लिए यह आवश्यक है कि जल्दी से जल्दी हम अपने कपड़े बदल डालें ; ताकि हम वहाँ चल कर देख सकें कि उस आदमी से कुछ काम निकल सकता है या नहीं ?”

इसके बाद अशोक लेट गये और एक घण्टा खूब सोये और जब काफी अँधेरा हो गया, तो दोनों व्यक्ति उस तरफ चल दिये ।

जब वह उस झोंपड़े तक पहुँचे, तो काफी अँधेरा हो चुका था । खिड़की की दरार से रोशनी आ रही थी और पीछे से किसी खच्चर के पैर पटखने की आवाज भी ।

दरवाजे पर रुक कर अशोक ने जोर से साँकल खटखटायी । कोई दरवाजे तक आया और चरमरा कर दरवाजा खुल गया । सामने गंदे कम्बल में लिपटा एक वृद्ध व्यक्ति खड़ा था । अशोक और सुन्दर को देखने के बाद वह फिर दरवाजा बन्द करने बढ़ा, लेकिन अशोक ने पैर लगा कर उसे रोक दिया ।

“पुजारियो ! ... चले जाओ,” वह बोला—“मेरे पास कुछ नहीं बचा है और तुम यह अच्छी तरह जानते हो... !” और वह न जाने क्या-क्या बकता चला गया ।

“तो क्या तुम दो पवित्र लामाओं को आग के पास नहीं बैठने दे सकते ?”—अशोक ने पूछा ।

“आग के पास जगह !”—उस बूढ़े ने दोहराया—“और यह घास-फूस जिस पर मैं सोता हूँ तुम्हारे थके शरीरों के लिए, और जो खाना मेरे पास है तुम्हारे खाली पेट को भरने के लिये ; और जो

कुछ पैसे हैं, तुम्हारी खाली जेबों को भरने के लिये; और जो खच्चर मेरे पास हैं वे तुम्हें लादने के लिए; और यह सब कुछ बुद्ध के लिए... हाँ-हाँ, बोलो और क्या चाहिए ?”

ये शब्द उसके मुँह से इतनी जल्दी निकल रहे थे कि वे जासूस को समझने में कठिनाई पड़ रही थी। आगे बढ़ कर अशोक ने उसकी कलाई पकड़ ली—“तो क्या भगवान् बुद्ध पर तुम्हारी अटूट श्रद्धा नहीं है ?”

उस आदमी की आँखों में भय समाया था, बोला, “हाँ... है तो !”—उसने कहा।

“तुम झूठ बोलते हो !”

“नहीं, नहीं, मुझ जैसे पागल की बातों पर ध्यान मत दीजिए। आइए, अन्दर चलिए। जो कुछ है सब आप का है !”

“मैं कहता हूँ कि तुम झूठ बोलते हो। वास्तव में तुम तथागत के सच्चे भक्त नहीं हो।”

उसकी कलाई छोड़ कर अशोक और सुन्दर अन्दर घुसे। झोंपड़ा बिल्कुल खाली था। जमीन पर बीच में एक गड्ढे में आग जल रही थी। एक कोने में भूसा भरा था और दूसरे में पुराने बर्तन थे।

“तुम्हारा पूजा का धर्मचक्र कहाँ है ?” अशोक ने उस बूढ़े से पूछा।

वह कमजोर व्यक्ति चुपचाप भयभीत-सा जासूस की तरफ देखता रहा।

“क्या अब भी तुम कह सकते हो कि तुम भगवान् बुद्ध के अनुयायी हो ?”

“भाई ! मैं बहुत भुगत चुका हूँ... अब मुझे और न सताओ... मुझ गरीब पर तरस खाओ... !” उस की आँखों से निराशा के भाव झलक रहे थे।

अपना टोपा उतार कर अशोक उसकी तरफ बढ़े—“तुम्हें बुद्ध के सेवकों ने सताया है। न तो तुम बौद्ध हो और न हम लामा हैं।

हम यह नकली वेश-भूषा धारण किये हैं, किसी मतलब से ही— और अब इसे जल्दी बदलना चाहते हैं ।”

“अच्छा तो तुम्हीं हो, जो कानजुत और पेटोङ्ग के मठ में उत्पात मचा कर भागे हो ? आज सुबह इन मठों के शिखरों पर से सांकेतिक प्रकाश हो रहा था और अब यहाँ से ल्हासा तक के रास्ते पर पहरा कड़ा लगा रहेगा । बुद्ध के सेवक जब उसे छोड़ देते हैं, तो वह उनसे नाराज हो जाता है ।”

अशोक ने सुन्दर की तरफ देखा—“तो यह बूढ़ा हमें भागे हुए पुजारी समझ रहा था, इसलिए सच बात बताने की कोई आवश्यकता नहीं है ।”

वे लोग अपने मठों में तुम्हें बुरी तरह कोंस रहे होंगे और बुद्ध की मूर्ति के आगे नतमस्तक हो कर तुम्हारी हत्या करने का वादा भी कर रहे होंगे ।”

“शान्त हो जाओ, मेरे दोस्त !” अशोक ने कहा—“सुबह तक हमें यहाँ से दूर चला जाना चाहिए और अगर हमारे लिए तुम खाना ला दोगे, तो हम तुम्हें काफी ईनाम देंगे ।”

“खतरा बहुत है !” उसने कहा, लेकिन फिर कुछ सोच कर बोला—“लेकिन मैं खतरा उठा लूँगा ।”

उसने कुछ रोटी और ठंडा गोश्त ला कर उन्हें दिया और जितनी देर वह खाते रहे उतनी देर में उसने आपबीती सुनायी—‘वह टोमो जाति का गड़ेरिया था और वे लोग चुम्बी में रहा करते थे । एक दफा उसके लड़के ने एक पुजारी से झगड़ा कर डाला । परिणाम-स्वरूप वह लड़का कानजुत मठ के कमरे में अत्याचार सहते-सहते मर गया । उसे आश्चर्य था कि वह क्यों जीवित है, लेकिन यह पक्का विश्वास था कि किसी दिन पुजारी उसे अवश्य लेने आयेंगे !’

अशोक ने उससे पूछा, “तुम यह जगह छोड़ क्यों नहीं देते हो ?”

पहले तो वह आश्चर्य से जासूस को देखता रहा, फिर बोला—“तो क्या तुम समझते हो कि उनके हाथों से मैं या तुम कोई भी बच सकता है ? दो सौ मील दूर मौत तुम्हारे पास उतनी ही आसानी से

आयेगी, जितनी कि यहाँ पर। कौन जाने तुम कितने दिन बचे रहोगे, लेकिन एक-न-एक दिन वे लोग तुम्हें ढूँढ़ ही लेंगे और तब दो बलियाँ बुद्ध के नाम पर और हो जायँगी।”

“तो हमें बचाने में शायद तुम्हारी कुछ भी सहायता हमें न मिलेगी ?”

यह सुन कर बूढ़ा कुछ झिझका; लेकिन जासूस ने उसका मन्तव्य समझ लिया था। अपनी कमर से बटुआ निकाल कर उसे दिखाया—“मेरे दोस्त ! इसमें से आधा तुम्हारा है ... कुछ समझे !” और अशोक ने कहा—“यदि तुम हमारे इन कपड़ों को जला दो और हमारे लिए दूसरे कपड़ों का इन्तजाम कर दो तो।”

बटुआ खोल कर उन्होंने सब सिक्के जमीन पर फैला दिये और उनके दो बराबर भाग किये; फिर एक भाग के दो और हिस्से किये।

“बड़ा हिस्सा कपड़ों के लिए और एक छोटा हिस्सा सवारी के खच्चर के लिए... बोलो !” उस व्यक्ति ने सब सिक्के उठाकर अपने लबादे की जेब में भी भर लिये और बोला—“ध्यान से मेरी बात सुनो ! पहाड़ी से हो कर जानेवाला एक रास्ता मुझे मालूम है, जो ग्यांत्सी तक जाता है और कल मैं वहाँ अपने खच्चर बेचने जाऊँगा। बारह खच्चर तैयार हैं। मेरे पास दूसरा कोई चरवाहा नहीं है और डर के मारे मेरे साथ के लोग मेरे साथ जाते नहीं, इसलिए चरवाहे बन कर तुम लोग मेरे साथ चले चलो। लेकिन यदि पहाड़ पर कोई काले कपड़ोंवाला पुजारी मिल गया, तो अपना अन्त समझना !”

“लेकिन यदि वे हमें तुम्हारे साथ देखेंगे, तो तुमसे पूछेंगे नहीं कि हम लोग कौन हैं ?”

“मैं सौगन्ध खा कर कह दूँगा कि मुझे पता नहीं—तुम लोग कौन हो और कहाँ से आये हो !”

उस रात को जब टोमो सो गया, तो सुन्दर और अशोक धीमी आवाज में बात करने लगे—

“क्या हम इस बूढ़े का भरोसा कर सकते हैं ?” सुन्दर ने पूछा।

“हाँ, फिल्हाल तो कर ही सकते हैं—वह एक दम भोला पहाड़ी है, देखा नहीं कि हमें देखते ही कैसा डर गया—लेकिन फिर कैसा हो गया । उस को खतरा तभी मालूम पड़ेगा, जब वह खतरे को सामने देख लेगा ।”

“किन्तु यदि पहाड़ पर हम से किसी लामा ने पूछ-ताछ की, तो वह हमें छोड़ देगा ?”

“अवश्य, क्योंकि तब उसके लिए पूरा खतरा हो जायगा और यह भी हो सकता है कि ग्यांत्से तक हमें ले जाय और फिर पैसे के लिए हमें धोखा दे ।”

“हाँ, क्योंकि यहाँ शायद वह उन पुजारियों से ही डरता है और यहाँ से हमें बचा कर वहाँ किसी दूसरे के हवाले कर दे । खैर हम उस पर नजर रखेंगे, क्योंकि किसी न किसी तरह हमें सेलाई के आश्रम तक तो पहुँचना ही है ।”

“मुझे सन्देह है कि मेजर भण्डारी अभी तक जीवित होंगे या नहीं भी ।” सुन्दर ने कहा ।

“कौन जाने ! जासूस ने कहा—“हमने पेटाङ्ग का मठ तो देख ही लिया और उसके अन्दर के भयानक पुजारी भी ।”

“.....”

“सेलाई इससे एक हजार गुना ज्यादा भयानक होगा, इसलिए मेजर भण्डारी और उसके साथियों के भाग्य के बारे में कोई कुछ नहीं कह सकता । लेकिन मैं अपने मित्र डॉक्टर जयन्त के हत्यारे कांगपू से तो अवश्य ही बदला ले कर रहूँगा—यह मैं ठान चुका हूँ । और बिना इसके मैं वापस नहीं जाऊँगा ।”

:०:

:०:

:०:

अगले दिन सुबह अशोक और सुन्दर, टोमो के साथ उत्तर-पूर्व की दिशा में, एक पेचीदा टेढ़े-मेढ़े रास्ते से चल दिये । उनके आगे-आगे पहाड़ी खच्चरों का झुण्ड चल रहा था और जो खच्चर सबसे बड़ा था, वह मशिकल से चार हाथ ऊँचा होगा ।

अशोक और सुन्दर गन्दे लबादे और उसी कपड़े के तंग पाजामे पहिने थे। पैर मे घुटनों तक ऊँचा नन्दे का जूता और सिर पर भारी पगड़ बाँधे थे; और फिर अपने को एक काले कम्बल में लपेटे थे, ताकि सर्दी से बच सकें।

टोमो से और पूछने पर कुछ पता न चला, सिवाय इसके कि करीब एक माह पहले जब वह ग्यांत्सी जा रहा था, तो उसने रात में पहाड़ी के नीचे, जहाँ खंडहर है, वहाँ डेरा डाला था। रात में अचानक उसकी नींद खुल गयी और उसने एक गाना सुना जो कई लोग एक साथ गा रहे थे। और उसके बाद रोने और चिल्लाने की आवाजें आईं, जिसे सुन कर वह डर गया। यहाँ तक कि उसके खच्चर भी डर गये और वह रस्सा तुड़ा कर भागे और टोमो भी भयभीत हो कर उनके पीछे भागने लगा।

यह कहानी उसने बड़े मजे से सुनाई। फिर कहने लगा—“आज रात को हम ग्यांत्सी नहीं पहुँच सकते, इसलिए यदि तुम हमारी बात का विश्वास नहीं करते और मेरे ऊपर हँस रहे हो, तो हो सकता है कि सुबह तक तुम अविश्वास न करो। आज रात को हम सात सूने मठों के पास डेरा डालेंगे और हो सकता है कि वह डरावनी आवाज फिर सुनाई पड़े।”

“तुम्हे डर तो नहीं लग रहा है?” अशोक ने पूछा।

“डर! नहीं, मेरी रखवाली के लिए तुम दोनों जो हो।”

और दाँत निपोर कर टोमो आगे बढ़ चला। वही बात थी, जो अशोक ने सुन्दर को बतायी थी—टोमो का अपरिपक्व मस्तिष्क खतरे को उसी समय जान सकता है, जब वह साक्षात् सामने आ जाय। इसलिए यदि रात में फिर भयानक आवाजें आईं, तो बहुत संभव है कि डर के मारे भाग जाय, लेकिन जब सुबह को लौटे तो सब कुछ भूल कर आये।

युद्ध में अगर उससे कहा गया जाय कि दुश्मन की मशीनगन की नली किसी भी समय आग उगल कर तुम्हारी जान ले सकती है, तो वह बिना कुछ सोचे उस पर हमला कर देगा। उसे खतरे की चिन्ता न होगी। लोग इसे हिम्मत कहते हैं, लेकिन यह हिम्मत नहीं है।’

अन्धेरा होने से पहले उन्होंने डेरा डाल दिया और खच्चरों को अपने चारों तरफ बांध दिया । पीछा करने का अभी तक कोई चिह्न अशोक और सुन्दर ने नहीं देखा था; लेकिन वह जानते थे कि पकड़े जाने का खतरा बराबर लगा है, जब तक सुबह को वे ग्यांत्सी न पहुँच जायें । लहासा को जानेवाली सड़क ग्यांत्सी हो कर जाती है; इसलिए उस सड़क पर पहुँचने के लिए उन्हें ग्यांत्सी अवश्य जाना पड़ेगा । टोमो से यह उन्होंने जान लिया था कि उस सड़क तक पहुँचने का कोई दूसरा रास्ता संभव नहीं है, इसलिए ग्यांत्सी का बीहड़ रास्ता उन्हें पार करना है और यही रास्ता सबसे अधिक खतरों से भरा भी है !

खाना खा लेने के बाद अशोक ने कहा—“मेरे मित्र मेरा विचार इन खंडहरों को देखने का है । क्या कोई रास्ता ऊपर को जाता है ?”

“एक पगडण्डी अवश्य ही ऊपर जाती है !”—उसने उत्तर दिया—“लेकिन वह काम में नहीं आती ।”

पगडण्डी की दिशा पूछ कर अशोक और सुन्दर उठ खड़े हुए । टोमो अपने कंबल को ओढ़ कर सोने की तैयारी करने लगा ।

खच्चरों की लाइन से निकल कर दोनों उसी सड़क की तरफ बढ़ने लगे । सड़क ऊबड़-खाबड़ थी और दोनों तरफ पेड़ की टहनियाँ टूट-टूट कर गिरी थीं । करीब घण्टे भर तक दोनों बढ़ते गये, तब सात आश्रमों में से पहले आश्रम की परछाईं दिखाई पड़ी ।

टार्च की सहायता से अशोक ने एक दरवाजा ढूँढ़ लिया । उसे पार करके वे लोग एक सुनसान आँगन में पहुँचे । कुछ देर तक कान लगाये सुनते रहे; लेकिन कोई आवाज सुनाई नहीं पड़ी । सतर्कतापूर्वक वे बढ़ते गये—“मेरे विचार से तो टोमो ठीक ही कह रहा था !”—सुन्दर ने कहा ।

“नहीं, मेरी समझ में यह बात नहीं है,” जासूस रुक गया; क्योंकि खंडहरों के अन्दर से किसी के बोलने की आवाज आ रही थी । धीरे-धीरे वह तेज हुई और फिर क्रमशः विलीन हो गई ।

सुन्दर को सिहरन-सी महसूस हुई ! वह बिल्कुल किसी प्रेत की आवाज लग रही थी । चारों तरफ खंडहरों में मनहूसियत फैली हुई थी ।

“क्यों—यह क्या था ?”

“चलो; लेकिन बहुत चुपचाप और अपना हाथ पिस्तौल पर रक्खो !”—अशोक ने कान में कहा और दोनों धीरे-धीरे अन्धकार में आगे बढ़ने लगे ।

बढ़ते-बढ़ते वे एक गलियारे तक पहुँच गये, जिसके दूसरे सिरे से बहुत धीमी नीली रोशनी आ रही थी । बहुत धीरे-धीरे दीवार के सहारे बढ़ते-बढ़ते वे लोग उस सिरे पर पहुँच गये और तब अशोक को पता चला कि यह रोशनी किसी बड़े मन्दिरमे से आ रही थी और दरवाजे पर पर्दा पड़ा था । पर्दे तक पहुँच कर वे लोग दीवार से चिपक गये और उँगली से जरा-सा पर्दा खिसकाया, अन्दर का हाल देखने के लिए । सुन्दर पर्दे की दरार से झाँकने लगा और जब उसकी निगाह ठीक हुई, तो उसने साँस रोक ली और खड़ा हो गया !

उनके सामने एक बहुत बड़ा मन्दिर था, जिसमें अनगिनत दीये जल रहे थे । मन्दिर के एक सिरे पर बुद्ध की सुनहरी मूर्ति खड़ी थी । ऊपर से आ रहे प्रकाश में वह मूर्ति खूब चमक रही थी । हवा में धूपबत्ती की महक आ रही थी; लेकिन जिस चीज ने सुन्दर का ध्यान विशेष कर आकर्षित किया, वह एक लम्बे मनुष्य की देह थी, जो विशाल मूर्तिके सामने निश्चल खड़ी थी और लाल कपड़े पहने थी । वह व्यक्ति भगवान् की तरफ मुँह किये खड़ा था और हाथ सिर के ऊपर उठाये था । सिवाय उसके सारा मन्दिर खाली था ।

एकाएक उस लम्बे आदमी ने प्रार्थना की—“हे तथागत ! हम लोग तेरी खोई हुई इज्जत लौटाने आये हैं और हमने तेरे सेवक काँगपू का संवाद सुन लिया है... हमारे पास वह पैनी तलवार है जो विदेशियों के खून की नदी बहायेगी; और उस लोहित नदी में हमलोग चलेंगे... हे भगवान् बुद्ध !! हम विनती करते हैं कि जब तक कि काँगपू लहासा का राजा न बन जाय... उसकी आत्मा को आज अपने में चला जाने दे । ... हम आज तेरे निकट, तेरे ही होंठों से वह सन्देश सुनना चाहते हैं, जो भयंकर युद्ध की आँधी लायेगा और विदेशी सम्यता की नींव उखाड़ कर फूँक देगा ।”

वह रुका और अन्धकार में से कई लोगों के चलने की आवाजें

आईं और दूसरे ही क्षण पुजारियों की एक पंक्ति मन्दिर में दाखिल हुई। वे लोग भगवान् के सामने गोलाकार रूप में खड़े हो गये और मिल कर सम्भवतः कोई प्रार्थना गाने लगे। अचानक उनका गाना रुक गया और निस्तब्धता छा गई; क्योंकि उस लम्बी देह ने धूम कर मुँह उन लोगों की तरफ कर दिया था।

सुन्दर के मुँह से आश्चर्य की साँस निकली—“कालादुलुई !” वास्तव में यह वही था। पेटांग के मठ का वह भयानक पुजारी ! भगवान् की प्रतिमा के दाईं तरफ एक चबूतरा था, उस पर से एक प्याला उठा कर कालादुलुई चुपचाप खड़ा हो गया, फिर हाथ सिर के ऊपर उठा कर बोला—“बलि का समय पास आ रहा है। तब तुम लोग चले जाओगे अपने-अपने रास्ते पर; सारी घाटी के लोगों को तथागत का सन्देश देते हुए। और चूँकि तुम तिब्बत के मठों और आश्रमों से यह सन्देश फैलाने के लिए चुने गये हो; इसलिए तुम आज प्रथम और अन्तिम बार अपने प्रभु—परमश्रेष्ठ काँगपू की आवाज सुनोगे, जो भगवान् का प्यारा सेवक है !”

उसने भगवान् की प्रतिमा की तरफ मुँह कर लिया। पुजारी शान्त खड़े थे।

अशोक ने अपना पिस्तौल निकाल कर उँगली घोड़े पर रख ली। और कालादुलुई कह रहा था—

“हे सर्वशक्तिमान् बुद्ध ! काँगपू की आत्मा को अपने में प्रवेश करने दो, जिससे कि तेरे यह सेवक उसका सन्देश सुन सकें।”

वह चुप हो गया। कोई नहीं हिला। और तब बुद्ध की प्रतिमा के होठों से आवाज आई—ठडी, गम्भीर... और शान्त !

“मेरी बात ध्यान से सुनो ! क्योंकि मैं काँगपू हूँ, भगवान् का सेवक और विदेशी सभ्यता का काल ! इस देश की गहराइयों में जाओ और वहाँ मेरा युद्ध का सन्देश फैलाओ। सब को कहो, तैयार रहें और मेरा संकेत पाते ही खून की नदी बहा दें... और अन्तिम संकेत ल्हासा से आयेगा। समय आ रहा है और वह दिन दूर नहीं जब समस्त विश्व पराजित होगा... और मैं काँगपू ल्हासा पर राज्य करूँगा ... सावधान !”

आवाज रुक गई । कालादुलुई ऐसे खड़ा था, मानों बेजान, पत्थर में बदल गया हो । अशोक सान्याल ने अपना रिवाल्वर ऊँचा उठाया, उसकी नली पर्दे से बाहर निकली थी—

“उसे जीवित नहीं रहना चाहिए, सुन्दर !”—वह बोला और सुन्दर समझ गया कि यह आदेश सिर्फ काँगपू के लिए ही था ।

“मुझे कोई नहीं जानता और मुझे किसी ने नहीं देखा है—” पुनः सुनाई दिया—“मैं दलाई लामा से बढ़ कर हूँ... काँगपू... जीवन और मृत्यु का मालिक और...”

ठायँ....!

अशोक ने सुनहरी प्रतिमा की आँखों को निशाना बना कर फायर किया । किसी के होठों से लम्बी तेज चीख निकली और तब सुन्दर को साथ लिए अशोक पर्दे से आगे बढ़े । पर्दा फिर अपनी जगह पर आ गया ।

:०:

:०:

:०:

सब पुजारी भौंचक्के हो कर देखते रह गये । कालादुलुई पीछे हटा और बिल्कुल बुद्ध-प्रतिमा से सट गया—वह खूनी आँखों से जासूस की तरफ घूर रहा था । उसके मुँह से भय और क्रोध दोनों झलक रहे थे । अपने हाथ में पिस्तौल लिये अशोक आगे बढ़ते गये ।

“कालादुलुई ! अपने परमश्रेष्ठ प्रभु को बुलाओ !” अशोक ने कहा—“मृत्यु और जीवन के स्वामी काँगपू को बुलाओ !!”

कालादुलुई ने कोई उत्तर नहीं दिया ।

“अब वह कहाँ है ?” अशोक ने कड़क कर कहा—“मौत और जिन्दगी का स्वामी, जो इन बेवकूफ काले कपड़े पहननेवाले मूर्खों को युद्ध का सन्देश देता है, बुलाओ वह कहाँ है ?”

पुजारियों की तरफ मुड़ कर जासूस ने कहा—“तुम सब-के-सब मूर्ख हो ! अपने-अपने मठों और आश्रमों को वापस लौट जाओ और शान्तिपूर्वक रहो । काँगपू की झूठी बातों को मत सुनो...वह मानवता का शत्रु है ।”

“यह झूठी बातें नहीं हैं, अभागे विदेशी !” कालादुलुई चिल्लाया—“प्रौर यह तुम्हें अभी मालूम पड़ जायेगा कि काँगपू क्या है और उसमें कितनी शक्ति है ! मैं तुम्हें जानता हूँ, तुम्ही ने पेटोंग के पवित्र मठ में ऊधम मचाया था ।”

सिर से ऊपर हाथ उठा कर उसने फिर कहा—“इन विदेशियों के ऊपर खूँखार कुत्ते छोड़ दो, ओ बुद्ध के निष्ठावान् पुजारियो ! जिससे इनकी लाशें लहासा की सड़कों पर फेंक दी जायँ, ताकि क्रोधित बुद्ध इन पापियों का खून पी सके ।”

पुजारियों के मुँह से धीमी किन्तु अशुभ लक्षणों से युक्त आवाज़ें निकली और वे बेचैनी से बुदबुदाते हुए आगे बढ़े ।

अशोक ने तत्क्षण ही खतरा भाँप लिया । आश्चर्य का पहला झोंका आ कर निकल गया था और वास्तविकता उन की समझ में आ चुकी थी—और वे सब कालादुलुई की आज्ञा से अशोक और सुन्दर पर आक्रमण करने को उद्यत थे !

“बेवकूफ़ पुजारियो सुनो !” जासूस ने चिल्ला कर कहा—“और तुम भी—पाखण्डी कालादुलुई ! मैं समस्त चराचर के स्वामी बुद्ध के सामने खड़ा हूँ । सब के सब साफ़-साफ़ जान रखो कि युद्ध तुम लोगों के लिए नहीं है और न तिब्बत के निवासियों के लिए । कालादुलुई—बुलाओ अपने भगवान् को या काँगपू को; और यह कहला दो कि मैं झूठ बोल रहा हूँ । मक्कार कालादुलुई ! अपने काँगपू को फौरन बुलाओ । और यदि वह कह दें कि मैं झूठ बोल रहा हूँ, तब तुम सच्चे हो ।”

पुजारी बहुत बेचैन थे । बार-बार वह भगवान् की तरफ देखते थे, लेकिन भगवान् चुप रहे । यह विचित्र अजनबी कौन है और कहाँ से आया है, वे जानते नहीं थे; लेकिन इसके आते ही काँगपू आतक से चिल्लाया था और शान्त हो गया था ।

“कालादुलुई ! तुम उस मौत को जानते हो, जो मेरे हाथ में है,—” अशोक ने कहा—“और यदि तुम अपने स्वामी को नहीं बुलाते तो तुम निश्चित ही मरोगे ।”

कालादुलुई के होंठ सूख रहे थे । वह अच्छी तरह से जानता था कि जासूस कैसी चालाकी से इन बेवकूफ़ पुजारियों को अपने

वश में ला रहा था। इसे अशोक भी समझते थे। दूसरे वह यह भी सोच रहे थे कि मूर्ति के अन्दर से जो व्यक्ति बोला था, वह काँगपू ही था या अन्य कोई उसका कार्य निभा रहा था !

“मैं सिर्फ़ तीन तक गिनूँगा कालादुलुई !”—अशोक ने कहा —“और यदि तुम काँगपू को नहीं बुलाते, तो तुम अवश्य ही मृत्यु को प्राप्त होगे ।”

अशोक का यह वार एकदम सटीक था। यदि इन बुद्ध के पुजारियों के मस्तिष्क में अपने शब्द बैठ सकें, तो युद्ध का सन्देश व्यर्थ चला जायगा, नहीं तो ये मूर्ख विश्व भर में युद्ध की चिनगारी फैला देंगे।

“एक... !”—अशोक के मुँह से निकला।

“.....”

“दो... ! !”

जासूस की उँगली घड़े पर कस गयी... और कालादुलुई चमकती आँखों से घूर रहा था। वह यह जानता था कि मौत सामने ही खड़ी है उसके मुँह से विचित्र बुदबुदाहट-सी हुई और एकाएक चिल्लाकर मुँह के बल भगवान् बुद्ध की मूर्ति के सामने लेट गया और दोनों हाथ मूर्ति के पैरों पर पटकने लगा।

“हे काँगपू... मेरे स्वामी ! तुम कहाँ हो ?” वह चिल्लाया —“हे सर्वकृतिमान बुद्ध !! इ ! विदेशी शत्रुओं को सजा दो ! इन पर बिजली गिरा दो। ये जो हमारे मन्दिरों में आकर हमारे पवित्र कार्यों में विघ्न डालते हैं। हे काँगपू !! शीघ्र आओ, और इन विदेशियों को अपना चमत्कार दिखाओ ताकि तुम्हारे ये पुजारी तुम्हारी शक्ति को अपनी आँखों से देख सकें !”

कालादुलुई लड़खड़ा कर खड़ा हो गया और पुजारियों की तरफ मुँह करके बोला—

“अरे मूर्ख कुत्ते ! उन पर टूट पड़ो !! क्या तुम नहीं देख रहे हो कि बुद्ध भगवान् तुम्हारी परीक्षा लेना चाहते हैं ? क्या तुम... !”

और एकाएक वह लड़खड़ा कर गिर पड़ा और बेहोश हो गया।

पुजारी आगे बढ़े; लेकिन अशोक उनकी तरफ मुड़े। सब के सब एक कदम पीछे हट कर रुक गये।

“देख लो ! यह चिह्न—भगवान् के पैरों के पास खड़े होकर कि काँगपू क्यों झूठ बोल रहा है ? युद्ध तुम लोगों के लिए नहीं है और न तिब्बत के सीधे-सादे लोगों के लिए । अपने-अपने घर लौट जाओ और उस झूठे पाखण्डी काँगपू की बातों पर विश्वास न करो ।”

एक पुजारी जो दूसरों से कुछ अधिक जीवट का था, बोला—
“तुम कौन हो ? इस तरह भगवान् के मन्दिर में चरवाहों के-से कपड़े पहने क्यों आये हो ?”

अशोक ने उस पुजारी की तरफ घूर कर देखा । वह जानते थे कि अचानक आ जान से ही वह लोग आश्चर्यचकित और भौंचक्के से रह गये थे । उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे ? उनका बड़ा पुजारी स्वयं बुद्ध के पैरों के पास मृतक समान पड़ा था । पता नहीं, यह अजनबी कौन है, जिसे अपने शब्दों पर इतना अटूट विश्वास है !

इस बार अशोक बोले, तो उनकी आवाज धीमी और शान्त गम्भीर थी—उन्हें पता था कि जिस सम्मोहन का प्रभाव उन लोगों पर है, उसके टूटते ही वे लोग उन दोनों पर टूट पड़ेंगे और टुकड़े-टुकड़े कर डालेंगे ।

“तुम पूछते हो कि मैं कौन हूँ ?” वह बोले—“तो सुनो ! मैं बहुत दूर से आया हूँ । यह देखने के लिए कि कहीं तुम लोग भगवान् बुद्ध की वाणी के विपरीत युद्ध के विनाशकारी रास्ते पर न चल दो; क्योंकि यह तुम्हें मौत के रास्ते पर ले जायेगा । काँगपू के झूठे शब्दों पर भरोसा मत करो, नहीं तो तुम्हारी लाशें सड़कों पर पड़ी-पड़ी सड़ेंगी और इस शान्तिप्रिय देश में मृत्यु का ताण्डव-नृत्य होगा, मैं यही संदेश लेकर आया हूँ ! ”

अशोक चुप हो गये, यह देखने के लिए कि उनकी बातों का प्रभाव पुजारियों पर पड़ रहा है या नहीं ! यह पुजारी अब युद्ध का सन्देश नहीं फैलायेंगे । चुपचाप अपने मठों में जा कर वे इस घटना के विषय में सोचेंगे ।

तभी अचानक सब बत्तियाँ बुझ गयीं और मन्दिर घुप्प अन्धेरे से भर गया और बुद्ध की प्रतिमा के सामने जहाँ कालादुर्लुई पड़ा था, आग की लपटें निकलीं ! ये लपटें बिल्कुल धरती से निकली

हुई मालूम पड़ रही थीं और रोशनी में देखा गया कि कालाडुलुई गायब हो चुका है ।

आग की परिधि बढ़ती गयी, यहाँ तक कि भगवान् बुद्ध स्वयं आग और धुएँ के समुद्र में डूब गये ।

एक हुंकार के साथ सब पुजारी जमीन पर लेट गये और अशोक तथा सुन्दर साँस रोक कर वह तमाशा देखते रहे !

:०:

:०:

:०:

धीरे-धीरे, लेकिन भयानक रूप से बुद्ध की सुनहली प्रतिमा का एक हाथ आगे की ओर फैला और फैलता चला गया, और अशोक तथा सुन्दर की तरफ बड़ी-बड़ी भद्दी उगलियों से इंगित करने लगा । पुजारी निश्चल खड़े देखते रहे । मूर्ति का भयंकर चेहरा आग की लपटों में से और भी डरावना मालूम पड़ रहा था ।

“देखो !”—एक कड़कती आवाज सुनाई दी —“बुद्ध का चिह्न देखो, अविश्वासी विदेशियो... अपवित्र कुत्तो ! ... अब अपनी आँखों से देखो कि....!!”

“चिह्न !”—एक पुजारी चिल्लाया—“यह बुद्ध की आवाज है...!!”

एक साथ सब के सब खड़े हो गये । अब उनका सन्देह मिट गया था ।

सब पागलों के समान उन दोनों जासूसों पर बेतहाशा टूट पड़े । सब इतने जोश में थे कि एक साथ ही पूरे वेग से बढ़ने के कारण सँभल न पाये और अशोक तथा सुन्दर से टकरा कर गिर पड़े । दोनों जासूस उन पुजारियों के नीचे दब-से गये ।

तब उनके कान में दबी-दबी-सी आवाज पड़ी—“इन्हे ग्यांत्सी के पार काँगपू के पास ले जाओ !”

इस आदेश के साथ ही आग की लपटें भी बुझ गई । अशोक और सुन्दर बुरी तरह छूटकारे के लिये लड़ रहे थे ; लेकिन शत्रु अधिक थे । शीघ्र ही उन्हें बाँध दिया गया और जब वे खड़े किये गये तो कालाडुलुई एक हाथ में मशाल लिये आता दिखायी पड़ा । पास आकर उसने अशोक के चेहरे को ध्यान से देखा और बोला—“नीच

विदेशी कुत्ते ! बोल, अब क्या कहता है ?” और एक घूँसा जासूस के मुँह पर मारा ।

“तुम्हारी चालाकी इस समय काम कर गई,” अशोक ने कहा —“लेकिन कपटी महन्त ! इस घूँसे का उत्तर तुम्हें शीघ्र ही मिल जायेगा ।”

“उत्तर... अर्थात् बदला ! ...हः हःहा ! ...कौन लेगा बदला ? क्या तुम... नहीं, यह संभव नहीं है; क्योंकि इस समय भी काँगपू तुम्हारी राह देख रहा है और मृत्यु-सभा में तुम्हारा न्याय होगा ।”

“मृत्यु-सभा को तू नहीं जानता !”—वह बोलता चला गया—“जीवन और मृत्यु के सरदारों को, जो तिब्बत पर राज्य करते हैं, तू नहीं जानता और जो काँगपू के हर वाक्य और आदेश पर आँख मूंद कर चलते हैं । तू उन महान् ‘पञ्चों’ को नहीं जानता नीच कुत्ते ! ‘पञ्च’—जिन्होंने ल्हासा के गुप्त आश्रमों में हजारों साल-से राज्य किया है; जिन पर मृत्यु का कोई प्रभाव नहीं और न समय का ही ।”

“कालादुलुई तुम अपनी लम्बी जबान बेकार चला रहे हो,” अशोक ने कहा—“तुम्हारी मृत्यु-सभा को मैं जूते की नोक पर रखता हूँ... समझे और न मुझे कुछ परवाह है उन ढोंगी पञ्चों की ही !

कालादुलुई ने मारने के लिए हाथ उठाया, लेकिन फिर रुक गया —“ठहरो, थोड़ा ठहरो, इन्हे पञ्चों के सामने खड़ा तो होने दो । अपनी आँखों से पञ्चों को देखना; फिर कहना कि तुम परवाह करते हो या नहीं । जब उनकी खोखली आँखें तुम्हें घूरेंगी और जब पोपला मुँह तुम्हारी सजा सुनायेगा, जब मौत का हाथ उठेगा और तुम दोनों के नामों के सामने मौत लिखी जायेगी—तब तुम परवाह करोगे ! तुम पापी हो और ल्हासा की ओट में रहकर मरोगे; किन्तु तुम्हारी आँखें स्वच्छ और पवित्र ‘कीचू’ नदी को नहीं देख पायेंगी ।”

पुजारियों की तरफ घूम कर उसने कोई आज्ञा दी । अशोक और सुन्दर एक आँगन में ले जाये गये, जहाँ कुछ गधे और खच्चर बाँधे थे और कुछ खम्पा भी थे, जिनके हाथों में मशालें थीं । इन्हीं की रोशनी में अशोक और सुन्दर एक-एक खच्चर से बाँध दिये गये । हाथ पीठ के पीछे और पैर खच्चर के पेट के नीचे से ।

सब तैयार होकर एक पंक्ति में खड़े हो गये । कालादुलुई मोटा काला कम्बल ओढ़े सबसे आगे था । जासूसों के दोनों तरफ दो-दो खम्पा तलवारें लिये चलने को तैयार खड़े थे । कालादुलुई ने आज्ञा दी और काफिला चल पड़ा अन्धेरे में !

पठार के किनारे-किनारे वे चलते गये और करीब दो घंटे ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर चलने के बाद एक पगडण्डी नीचे जाती हुई मिली । अब उस पगडण्डी पर वे लोग आगे बढ़े । इस समय तक सूरज कुछ निकल आया था और अगल-बगल में लगे हुए सलाई और देवदार के वृक्ष दिखायी पड़ रहे थे और ज्यों-ज्यों वह ग्यांत्सी की घाटी में उतरते गये, त्यों-त्यों राह में मिलनेवाले आदिमियों की संख्या भी बढ़ती गई ।

सुन्दर ने गौर किया कि यह घाटी चार पहाड़ियों के मध्य में स्थित है । उस 'निन्नी' नामक घाटी को पार करके जब ये लोग 'ग्यांत्सी' कस्बे में घुसे, तो तापक्रम काफी बढ़ गया था । ग्यांत्सी एक अच्छा रौनकवाला कस्बा था । इमारतें पत्थर की थी और सड़के सँकरी । वहाँ रहनेवाले स्त्री, पुरुष, तथा बच्चे आश्चर्यचकित होकर खच्चरों की इस कतार को खामोश-से खड़े-खड़े देख रहे थे और भूखे कुत्ते इन्हें देख कर भौंक रहे थे । लेकिन बोलने या किसी से पूछने की किसी में हिम्मत न थी; क्योंकि काला लबादा पहने हुए एक भयंकर पुजारी आगे-आगे चल रहा था । वह केवल सामने देख रहा था; न दाएँ न बाएँ । सम्भवतः कोई बड़ा लामा होगा, जो पवित्र ल्हासा को किसी काम से जा रहा था । वे लोग 'फाल्कर-चौड़' की दीवार पार कर रहे थे, जो तिब्बत का एक प्रसिद्ध मठ था और इसके बाद ग्यांत्सी के पार एक सड़क थी, जो सीधी ल्हासा जाती थी । गुप्त और रहस्यमय ल्हासा ! जहाँ किसी अजनबी की छाया तक नहीं पड़ सकती थी, उस रात नाग्ले-जौंग के किले में डेरा डाला गया, जो ग्यांत्सी से करीब बीस मील दूर था ।

अशोक सान्याल और सुन्दर को खच्चरों से उतार कर फिर बाँध दिया गया और वे पहरेदारों के बीच रखे गये । उन्हें आपस में बात तक भी नहीं करने दी गयी ।

सुन्दर फिर मेजर भण्डारी और उनके साथियों के बारे में सोचने लगा, जो कुछ माह पहले इसी सड़क से गुजरे थे। अब वह कहाँ हैं ? वे लोग मार डाले गये या सेलाई आश्रम के किसी अन्धकूप में पड़े सड़ रहे हैं ? और जब उसके दिमाग में काँगपू की वह छाया आई जो उन के दिल के पीछे पड़ी थी, तो उसने सोचा कि उसके बाँस अशोक सान्याल की यह चेष्टा कितनी निरर्थक थी !

तिब्बत में हजारों आँखें पहरा देती हैं और असंख्य पहरेदार हैं; तब दो अजनबी किस प्रकार ल्हासा तक पहुँच सकते थे ? ग्यांत्सी के पासवाले सात आश्रमों तक पहुँचना ही कोई सरल कार्य न था; और फिर काँगपू से बदला लेने की बात सोचना ही मूर्खता थी ! खैर ! जो कुछ हुआ वह तो होना ही था। अशोक और सुन्दर अक्सर मुसीबतों में पड़े थे; लेकिन ऐसी दुर्दशा कभी नहीं हुई थी, क्योंकि यदि वे लोग बच भी जायँ तो भी काले कपड़े पहननेवाले पुजारी, जो काँगपू के अन्धभक्त हैं, उनका पीछा करेंगे ही। उन का कोई मित्र नहीं था वहाँ पर और न कोई ऐसा आदमी, जिस पर वे भरोसा कर सकें। उन्हें टोमो का ख्याल भी आया, तो यह सोचा कि शायद उसे उनके पकड़े जाने का पता ही न चला हो; और वह काँगपू का गुप्तचर भी हो सकता था—सभी कुछ सम्भव है यहाँ पर !

तीन दिन तक वे लोग यात्रा करते रहे और तीसरे दिन संध्या को उन्होंने कारोला के पास नोजिकाडसाड की बर्फ से ढकी चोटी पर डेरा डाला। अपना भारी कम्बल और काला कपड़ा ओढ़े कालादुलाई उस जगह पहुँचा, जहाँ अशोक पड़े थे। कुछ देर तो वह अशोक के चेहरे पर दृष्टि गड़ाये देखता रहा, फिर उँगली उठा कर बोला—

“तुम्हारा समय निकट है, मूर्ख ! कारोला के उस तरफ जो कुछ है, सब अन्धकार में छिप गया है और इधर मृत्यु-सभा अब तक बैठ चुकी होगी और तुम्हारा इन्तजार कर रही होगी। महान् पंचों को हमारे पहुँचने की सूचना मिल गई है और वह मशाल जो जल रही है, वह तिब्बत के निवासियों के लिए एक चेतावनी है कि कारोला के मठ में मृत्यु-सभा होगी और पञ्च अपना निर्णय सुनाएँगे।”

पहरेदार काँप उठे—जाड़े से नहीं। उनके काँपते होठों से प्रार्थनाएँ निकल रही थी और दूर अन्धकार को चीरती हुई एक लाल मशाल जल रही थी।

वह मशाल केवल इस रात और जलेगी,” कालादुलुई ने कहा—
“फिर दिन निकलते-निकलते बुझ कर शान्त हो जायेगी; और उस कारोला के भयंकर मठ के एक प्रांगण में मृत्यु-सभा बड़ी बेसब्री से राह देख रही है—काँगपू के बनाये नियम तोड़नेवालों का... कुछ समय में आया, मूर्ख !...” और झटके के साथ घूम कर वह एक चट्टान की ओट में चला गया।

रात में कई बार सिर उठा-उठा कर अशोक सान्याल ने देखा कि वह मशाल बराबर जल रही है और पौ फटते ही वह बुझ गयी और कालादुलुई ने चलने की आज्ञा दी।

जब वे लोग दर्रे के पास पहुँचे, तो दोपहर हो गई थी और उसे पार करने के बाद बहुत दूर एक धुँधला-सा किला दिखाई पड़ा, जो सम्भवतः सैकड़ों वर्ष पुराना था। हवा चलने के कारण उस पर बर्फ नहीं जम सकी थी और इस किले की संगीन दीवारें ‘कारोला’ के प्राचीन मठ की रक्षक थीं। काफिला प्राचीन किले की तरफ बढ़ता चला गया, जीवन का वहाँ कोई लक्षण नहीं था और सुन्दर यह सोच कर काँप-सा उठा कि उन दीवारों के अन्दर क्या होगा !

काली लकड़ी के बड़े फाटक तक कालादुलुई सब के आगे-आगे पहुँचा और फौरन ही दरवाजा खुल गया।

“भाग्यहीन प्राणियो ! एक बार सिर उठा कर आकाश को जी भर कर देख लो; क्योंकि एक बार अन्दर पहुँच कर फिर तुम्हारी आँखें इसे दोबारा नहीं देख पायेंगी, क्योंकि तुम बाहर नहीं लौट सकते और कुत्ते की मौत मारे जाओगे... अपनी आँखों से काँगपू को अपने अपमान का प्रतिशोध लेते हुए देखोगे, और वह भयंकर पुजारी जोरो से अट्टहास कर उठा।

:०:

:०:

अशोक और सुन्दर को खच्चरों से उतार लिया गया और सब बड़े फाटक से अन्दर चले। कालादुलुई उनके आगे-आगे था।

देहली पार करके वे लोग बड़े लम्बे-चौड़े रास्ते में पहुँचे, जो पत्थर का था। दीवारों पर विचित्र-विचित्र डरावने चेहरे बने थे और तरह-तरह की नकाबें लटकी हुई थीं।

एक भयानक नाटा और मोटा बौना एक कोने से उनकी तरफ बढ़ा। उसने कालाडुलई से कुछ बात की और ताली बजायी। फौरन एक पुजारी हाजिर हुआ, जिसके कंधों पर चाभियों का गुच्छा लटक रहा था। मोटे बौने के आदेश पर उस पुजारी ने पहरेदारों से कुछ इशारा किया और वे लोग अशोक और सुन्दर को लिये हुए आगे बढ़े। पुजारी आगे-आगे चल कर रास्ता दिखा रहा था। कुछ दूर बढ़ने पर नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ, थी, उन्हीं से नीचे उतर कर वह एक दरवाजे के सामने रुका और गुच्छे से चाभी ढूँढ़ कर उसने दरवाजा खोल दिया। सुन्दर और अशोक के मुँह पर कपड़ा बाँध दिया गया और उन्हें अन्दर धकेल कर फिर दरवाजा बन्द कर दिया गया। उन दोनों ने अपने को गहरे अन्धकार में पाया।

टटोल-टटोल कर उन्होंने अपने कैदखाने की जानकारी करनी चाही। वह कमरा नौ वर्ग फुट से शायद ही कुछ बड़ा था और एक दम खाली था। पत्थर की जमीन पर वे लोग दीवाल से टेक लगा कर बैठ गये और जो कुछ उन पर बीतनेवाला था उसका बेसब्री से इंतजार करने लगे। उनके हाथ बहुत कस कर बाँधे गये थे और मुँह खोलने तक की गुंजाइश नहीं थी।

करीब घंटा भर बीत जाने के बाद किसी के नीचे उतरने की आवाज आयी। ताले में चाभी घूमी और दरवाजा खुल गया। बाहर छः खम्पा पुजारी खड़े थे—काले लबादों वाले; और एक के हाथ में लालटेन थी! “महान् पञ्च इंतजार कर रहे हैं... उठो! —उसने कहा।

अशोक और सुन्दर को पकड़ कर खड़ा किया गया—फिर उन्हें धकेल कर बाहर लाये; और इसके उपरान्त एक-से-दूसरा—कई लम्बे-लम्बे गलियारे पार किये गये। अन्ततः एक दरवाजे पर वे लोग रुक गए, जहाँ एक लामा नंगी तलवार लिये पहरा दे रहा था।

एक पुजारी ने दरवाजा खटखटाया। अशोक और सुन्दर की ओर देखा और वह चतुर लामा समझ गया कि कुछ होनेवाला है।

एक क्षण की खामोशी के बाद अन्दर से तीखी आवाज आयी—“अन्दर आओ...!” और दरवाजा खुल गया। अशोक और मुन्दर को अन्दर ले जा कर दरवाजा बन्द कर दिया गया। उस पत्थर के बड़े कमरे के बीचों-बीच एक लम्बा बेंच पड़ा था और उस पर पाँच व्यक्ति काले कपड़े पहने बैठे थे। उनके चेहरे भयानक चेहरोंवाली नकाबों से ढके हुए थे और उनके हाथ सामने की मेज पर रखे थे। दरवाजे की तरफ मुँह किये हुए वे लोग एक पंक्ति में बैठे थे। बीचवाले व्यक्ति के सामने एक डंडा और लिपटा हुआ कागज रखा था।

अशोक सान्याल और उनका सहकारी मुन्दर मेज से एक फुट दूर खड़े कर दिये गये और खम्पा पुजारी उनके पीछे खड़े हो गये। बीचवाले व्यक्ति के इशारे पर उन दोनों के मुँह से कपड़ा निकाल दिया गया। यह स्पष्ट था कि वही सरपञ्च अथवा निर्णायक सब कुछ था।

“कुछ समय पहले !”—उसने कर्कश आवाज में कहा—“तुम लोगों ने सीमा पार कर तिब्बत के इस पवित्र देश में पैर रखने की धृष्टता की...पेटोङ्ग के महन्त का अपमान किया और अपने यहाँ आने के कारण भी तुम लोग नहीं बताते। फिर सात आश्रमों के मठ में बुद्ध के पवित्र मन्दिर में जो पाप-कर्म किया, उससे तुम दोनों को तत्क्षण मृत्यु-दण्ड दिया जा सकता था। किन्तु भगवान् ने तुम लोगों को हमारे पास भेज दिया है, जिससे हम लोग तुम दोनों का तिब्बत की पवित्र सीमा लाँघने का अभिप्राय जान सकें—इसका पता होते हुए भी कि यह कार्य यहाँ के नियम मुताबिक एक जघन्य कार्य है।”

“तो तुम मेरा अभिप्राय नहीं जानते ?” अशोक ने कहा—
“क्या मैंने साफ-साफ सात आश्रमों के मन्दिर में नहीं बताया था ?”

वह काली देह आगे झुकी—“जो कुछ तुमने वहाँ कहाँ था, उसका दण्ड तड़पा कर मौत है। तड़पाने के साधन ऐसे हैं, जो इन दीवालों के बाहर किसी को नहीं मालूम। तुमने कहा था कि तुम तिब्बत के लोगों को युद्ध के रास्ते से हटाने आये हो !” और खड़े हो कर उसने एक घूँसा मेज पर मारा—“कौन हो तुम नीच ?...कौन

हो तुम, जो काँगपू की बात काटने की गुस्ताखी कर रहे हो ? बोलो !”

“मैं कौन हूँ, इससे तुम्हें क्या सरोकार ?” अशोक ने बिना किसी हिचकिचाहट के साहसपूर्वक कहा—“तुम काँगपू की कठपुतली हो । अपने शब्द बचा लो ; क्योंकि तुम्हारे किसी प्रश्न का मैं उत्तर नहीं दूँगा ।”

उस नकाब के अन्दर से दो जलती हुई आँखें निडर जासूस को घूरती रही—“यदि यह तुम्हारी जवान स्पष्ट उत्तर न देगी तो जड़ से उखाड़ दी जायेगी । मौत ने तुम्हारे ऊपर अधिकार कर ही लिया है, लेकिन तुम्हें नहीं मालूम कि वह कितनी वेदनापूर्ण हो सकती है ! यदि मैं इस लकड़ी को उठा लूँ, तो तुम तड़पानेवाले कमरे में डाल दिये जाओगे, जहाँ यन्त्रणाएँ तुम्हारी राह देख रही हैं और वहाँ से तुम निकलोगे—टूट कर, अंधे हो कर और बुद्ध से अपनी मौत की भिक्षा मांगते हुए ।”

“तब इस लकड़ी को उठा लो और इस जेहूदा मजाक को बन्द करो,” अशोक ने कहा—“मैं . . .

और अशोक कहते-कहते रुक गये थे ; क्योंकि उस प्रश्नकर्त्ता नकाबपोश के पीछे की दीवाल का एक भाग पीछे हटता जा रहा था—और उस हटे हुए भाग या दरवाजे में काले कपड़े पहने एक व्यक्ति खड़ा था और उसके पीछे और भी लोग थे जो हाथ बांधे खड़े थे । तब धीरे-धीरे अन्धेरा दूर हो गया । अशोक और सुन्दर ने एक कमरा देखा, जहाँ उत्पीड़न के हजारों साधन मौजूद थे । दाँतेदार पहिया, पीतल के कंटीले औजार, सड़सी और इनके अतिरिक्त और भी बहुत से विचित्र हथियार अपनी-अपनी जगह सजे थे ।

“अत्याचार एवं उत्पीड़न का कमरा तथा वहाँ के साधन देख लो, कुत्तो !”—सरपञ्च ने कहा—“तुम, जिसने बुद्ध के प्यारे काँगपू का अपमान किया है, और . . . !”

“वास्तव में बहुत अच्छा है !”—अशोक उसकी बात काटते हुए बोले, “जिस सड़ियल कमरे में तुम जंगखोर और मुरदार कौए बैठे हो, उसी के जोड़ का वह भी है ।”

“देखा, इस नीच विदेशी के गुस्ताख उत्तर को आप लोगों ने सुन ही लिया है”—अपने बगल में बैठी हुई काली मूर्तियों की तरफ घूम कर सरपंच ने कहा—“अधिक समय बरबाद मत करो । अपने नकाब खोल दो, ताकि सजा सुनाई जा सके ।”

:०:

:०:

:०:

जब पाँचों व्यक्तियों के काले दस्ताने पहने हुए हाथ अपनी-अपनी नकाबें उतारने के लिये उठे, तब सुन्दर की समझ में आया कि वह क्या देखेगा !

कालादुर्लुई के वे शब्द उसके दिमाग में घूम गये—“पंच, जिन्होंने ल्हासा के गुप्त आश्रमों में हजारों वर्षों से राज्य किया है... और जिन पर मौत का कोई प्रभाव नहीं !”

फिर चौंक कर उसने साँस रोक ली, जब पाँचों नकाबें हट गईं और नीचे के चेहरे दिखाई पड़े । जिन कंधों पर वे चेहरे रक्खे थे, उन्हें कोई ‘मनुष्य’ नहीं कह सकता था । चेहरा भी क्या—पीली झुर्रियोदार खाल, गड्ढों में धँसी हुई आँखें, दाँत गायब, सूखे-सिकुड़े हाँठ, पपड़ी जमे हुए ! “घोखा है !” अचानक अशोक के दिमाग में आया कि यह सब छल-फरेब है—इतना वृद्ध हो कर कोई भी जीवित नहीं रह सकता था ।

“महान् पंचों के चेहरे देख लो !”—सरपंच की कर्कश आवाज आयी । सुन्दर के विचार एकाएक उस आवाज पर ग़ौर करने लगे जिस गले से ये तीखे शब्द निकले थे ! क्योंकि उसके स्वर-तन्तुओं को बहुत दिन पहले ही खराब हो जाना चाहिए था !

“मृत्यु-सभा के न्यायाधीशों के चेहरे देख लो, जिन पर मृत्यु का तनिक भी प्रभाव नहीं है । जितने पुराने तिब्बत के आश्रम हैं, उतने वृद्ध हम भी हैं, जो ल्हासा की देख-भाल करते हैं । जीवन और मृत्यु के सरदारों को देख लो, कुत्तो !—क्यों हमारी सीमा में मरने आये हो ।” फिर अपने बाकी साथियों की तरफ घूमकर उसने यह कहा—

“तुम काँगपू की बात सुन चुके हो, भाइयो ! और इस नीच कुत्ते की भी सुनी है । काँगपू इस की मौत चाहता है । हजार यातनाएँ देने के बाद की मौत ।...क्या तुम सहमत हो ?”

चारों खोपड़ियाँ एक साथ हिलीं और तब सरपंच ने लकड़ी का डंडा उठा कर अशोक और सुन्दर की तरफ इशारा किया—
“मृत्यु-सभा का निर्णय यह है !—उसने कहा, “तुम दोनों अत्याचार के कमरे में मरोगे । मौत तुम और तुम्हारे साथी पर एक दम नहीं आयगी, बल्कि धीरे-धीरे आयगी; यहाँ तक कि केवल मस्तिष्क के अतिरिक्त और कुछ तुम दोनों के पास नहीं बचेगा । दोनों की एक-एक हड्डी एक-एक बाजू तोड़ा जायेगा, तुम लोग नीत्र पीड़ा से तड़पोगे, चिल्लाओगे; लेकिन मौत फिर भी नहीं आयगी ! ...समझे ! !”

वह बैठ गया और पंचों ने फिर नकाब लगा ली । इसके बाद डण्डे से उसने कुछ इशारा किया और अशोक एवं सुन्दर को पकड़ कर उसी अत्याचार के कमरे में धकेल दिया गया, जहाँ लाल कपड़े पहने हुए जल्लादों ने उन दोनों की अलग-अलग तख्तों पर लिटा कर उनके घुटनों और कलाईयों पर पेंच कस दिये । तब उस कमरे में कालादुर्लुई आया और जलती हुई आँखों से उसने अशोक को देखा । “तो कुत्तो, यह तुम्हारा अन्त है ! मैं यहाँ तुम लोगों की हड्डियाँ चटखने की आवाज सुनने आया हूँ और अब मैं दोनों को पीड़ा से छटपटाता देख कर अपनी आँखें तृप्त करूँगा ।”

अशोक ने पेटोङ्ग के पुजारी की घृणित आँखों को देखा—“यह खेल और उसके साधन सभी अच्छे हैं, मक्कार पुजारी !...अपनी तबीयत प्रसन्न करने का इरादा भी बुरा नहीं !...गीदड़ कही का । डरपोक ही ऐसे कुकृत्य करते हैं, बहादुर नहीं ।”

“जबान बन्द करो !”—कालादुर्लुई ने कहा और आगे बढ़ कर जासूस को एक ठोकर मारी, फिर घूम कर उसने कोई आज्ञा दी और दो जल्लादों ने लपक कर दाँतेदार पहिए का हत्था पकड़ लिया और घुमान लगे । जासूस के घुटने और कलाई के जोड़ कसने लगे और अपार वेदना होने लगी ।

दोनों जल्लाद धीरे-धीरे चक्का कसते जाते थे और अशोक को मालूम पड़ा कि उसके हाथ पैर जरूर टूट जाएंगे—उन्होंने आँखें बन्द कर ली ! और कष्ट के मारे माथे पर पसीने की बूँदे आ गईं ।

किन्तु उनके उत्पीड़न-कार्य में एकाएक बाधा आ पड़ी । काले कपड़े पहने हुए एक पुजारी अन्दर आया और कालादुलुई से बोला, “कालादुलुई ! लहासा से एक आदमी आया है, जो तुम से बात करना चाहता है ।”

‘ कालादुलुई ने क्रुद्ध स्वर में कहा—“चले जाओ, वह इंतजार कर सकता है ।

“नहीं उसका काम बहुत आवश्यक है, कालादुलुई ! और उसे तुरन्त ही फाल्कर-चाँड जाना है ।”

कालादुलुई कुछ सोच कर बोला—“इन कुत्तों को मेरे लिए अभी जीवित रखना ! इन्हे उसी कोठरी में पहुँचा दो और अब इनसे मैं कल समझूँगा । इतने से इन्हें कुछ मालूम हो गया होगा कि मैंने इनके लिए क्या-क्या प्रबन्ध कर रक्खा है ।” और वह चला गया ।

जासूस को तख्ते से खोलकर खड़ा किया गया और वे दोनों पहरे में फिर उसी पुरानी कोठरी में ले जाये गये । वहाँ पहुँचा कर इनके हाथ-पैर बाँध दिये गये और मुँह में कपड़ा ठूँस दिया गया । बाहर से ताला लगा कर वे लोग चले गए । अन्दर फिर गहरा अन्धकार छा गया ।

यद्यपि वे लोग बहुत बड़े खतरे में थे, लेकिन तब भी अशोक और सुन्दर ने साहस नहीं छोड़ा ।

करीब घण्टे भर तक पूर्ण शान्ति रही । अशोक बराबर अपने मुँह के कपड़े को जबान और दाँत से हटाने का प्रयत्न करते रहे और अन्ततः कड़ी कशमकश के बाद उस कपड़े को मुँह से बाहर निकालने में सफल हो ही गये । तब फर्श पर एक-एक इंच खिसक कर वह सुन्दर के पास पहुँच गए और उसके कान में कुछ कहने के बाद अपने सहकारी की कलाई में बँधी रस्सी पर जुट गये । करीब एक घण्टे की मेहनत के बाद सुन्दर के बन्धन ढीले हुए । तब तो

कुछ क्षणों में ही उसने अशोक को भी खोल दिया । इसके बाद, वे दोनों दीवार से अपनी-अपनी पीठ लगा कर बैठ गये और अगला कार्यक्रम बनाने लगे ।

“वे लोग हमें लेने किसी भी समय आ सकते हैं !”—अशोक ने कहा—“और दोबारा उस अत्याचार के कमरे में कैद होने के उपरान्त फिर बचने का कोई मौका नहीं है । हो सकता है कि कालादुर्लुई हमें बुलाये; और यह भी संभव है कि हमें भूखा न मरने दे । अगर खाना लाया गया, तो अधिक से अधिक दो आदमी लाएँगे और तीन बाहर रहेगे । यदि हम उन्हें बश में कर सके, तो कुछ आशा है ।”

“मान लीजिए कि हम उन्हें बश में कर लेते हैं; फिर हमें क्या करना होगा बाँस ?” सुन्दर ने पूछा ।

हम कुछ तय नहीं कर सकते सुन्दर ! हमें मौका देख कर काम करना है । खैर, प्रत्येक अवस्था में, जो भी कोई दरवाजा खोल कर अन्दर आयेगा, उस पर हावी होकर ही बाहर निकल सकेगे; और यदि रास्ते में कटकर मर भी गये, तो उस बेवसी की मौत से अच्छे ही रहेगे, जो उस कमरे में हमें मिलेगी !”

“और यदि हम यहाँ से बच गए, फिर उसके बाद...?” सुन्दर ने पूछा ।

“उसके बाद हम लहासा की तरफ बढ़ेंगे !—अशोक ने कहा—“वापस लौटने की कोशिश करना बेकार है । और जयन्त के मरते समय मैंने उसमें वादा भी किया था और इसके साथ ही इस भयानक कांगपू के जीते जी मैं वापस नहीं जाना चाहता...सुन्दर ! मैं उसके पीछे पड़ा हूँ जब तक कि बीच में मौत अड़चन न डाले ।”

घण्टो गुजर गये, पर कोई नहीं आया । वे नहीं जान सकते थे कि दिन है या कि रात; क्योंकि कमरे में बिलकुल अंधेरा था ।

और तब सीढ़ी से नीचे उतरने की आवाज आयी ।

“सावधान सुन्दर ! यह अन्तिम अवसर है !” और अशोक ने सुन्दर का हाथ दबा दिया ।

ताले में एक चाभी घूमी और दरवाजा धीरे से खुल गया । काले कपड़े पहने एक पुजारी हाथ में लालटेन लिये चौखट पर खड़ा

था । एक दूसरा व्यक्ति भी आ गया, जो हाथ में गर्म-गर्म दलिए के दो प्याले लिए था । पुजारी ने लालटेन ऊपर उठाई और कमरे में झाँका—उसने कैदियों को बिल्कुल शान्त बैठे देखा । उनके मुँह में कपड़ा ठूँसा हुआ था और हाथ-पैर बँधे थे । एक इशारे से उसने खाना लानेवाले पुजारी को आगे बढ़ने के लिए कहा । वह आगे बढ़ कर एक प्याला सुन्दर के सामने रखने को झुका और तभी एकाएक सुन्दर ने कस कर उसका गला पकड़ लिया और इतना कस कर कि चीखने की आवाज तक न निकल सकी । और दोनों में गुत्थम-गुत्था हो गयी । उधर अशोक उस लालटेनवाले पुजारी पर झपट पड़े और उसके टखने पकड़ कर नीचे खींच लिया । वह पुजारी मुँह के बल गिर पड़ा और लालटेन भी गिर कर फूट गयी । उसका तेल फैल कर जलने लगा । जामूस ने शार बाहर न सुनाई देने के लिए दरवाजा बन्द कर दिया, तब सुन्दर की तरफ बढ़े । वे दोनों अभी तक गुँथे हुए थे । दूसरा पुजारी चोट से बेहोश हो गया था और लालटेन का तेल जल रहा था । उसे आग से दूर खींच कर एक तरफ करने के बाद अशोक ने एक ठोकर मार कर सुन्दर के प्रतिद्वन्द्वी को भी ठंडा कर दिया । कुछ ही देर में दोनों के मुँह में कपड़ा ठूँस कर बाँध दिया गया और जब तक तेल समाप्त हो, अशोक और सुन्दर ने उन दोनों के कपड़े उतार कर पहन लिये । फिर उन दोनों बँधे पुजारियों को दीवार के पास डाल कर वे लोग बाहर निकल आये और दरवाजा बन्द करके ताला लगा दिया—

“अपना चेहरा अच्छी तरह ढँके रहना !—अशोक ने दबे स्वर में कहा और दोनों सीढ़ी चढ़ने लगे । ऊपर सिरे पर एक पुजारी लम्बी तलवार लिये खड़ा था । सुन्दर का कलेजा धुकधुकाने लगा । क्या वे लोग यह रास्ता पार कर सकेंगे ?

“तुम लालटेन नहीं लाये ?” उस पुजारी ने पूछा ।

“नहीं, इससे कोई खास लाभ नहीं होता, क्योंकि वहाँ वे खराब हो गयीं । अतः हम उसे नीचे रास्ते में ही छोड़ आये ।”

“और प्याले भी उन कुत्तों के पास छोड़ आये ?”

“अवश्य ! क्या यह आज्ञा नहीं है कि कुत्तों की नाक में सिर्फ खाने की खुशबू जाये । एक कौर भी उनके मुँह में न जाने पाये ।”

पहरेदार जोर से हँसा और रास्ता देने के लिए एक तरफ हट गया। सुन्दर को देख कर वह बोला—“लेकिन भाई, तुम पहले से कुछ नाटे बन कर आये हो, इतना...!” उसका यह कहना ही काफी था; और अशोक का एक भरपूर धूँसा पहरेदार के मुँह पर पड़ा। पहरेदार लड़खड़ाया और सीढ़ी से नीचे लुढ़क गया—तलवार हाथ से छिटक गयी, और सुन्दर ने उसे लपक कर उठा लिया।

“जल्दी करो !”—अशोक ने चिल्लाकर कहा, “खोने के लिए एक मिनट भी हमारे पास नहीं है।”

थोड़ी देर बाद वे लोग बड़े हाल में थे, जिसमें मुख्य दरवाजा था। हाल खाली था; लेकिन किसी भी क्षण कोई पुजारी आ सकता था। धीरे-धीरे अशोक और सुन्दर दरवाजे की तरफ बढ़े, पर न जाने किस कोने से फिर वही कुरूप थुलथुल बौना निकल आया, जो उन्हें पहले भी मिला था। उसने इन दोनों को घूर कर देखा—

“कहाँ जा रहे हो ?” उसने प्रश्न किया।

निस्सन्देह वह मुख्य दरवाजे का पहरेदार था ! अशोक जानते थे कि पुजारियों को बड़ी मुश्किल से मठों के बाहर जाने दिया जाता था, इसलिए यदि बाहर जाना था, तो इस बौने को सन्तुष्ट करने के लिए एक अच्छा बहाना भी चाहिए।

“कहाँ जा रहे हो ?”—बौना फिर चिल्लाया।

एक क्षण अशोक की निगाह उसके कन्धे पर लटकी हुई चाभियों के गुच्छे पर पड़ी।

“हम तनिक बाहर जा रहे हैं।” अशोक ने कहा और फौरन सुन्दर के हाथ से तलवार ले कर उस की छाती से लगा दी।

“दरवाजा खोलो, नहीं तो यह तलवार तुम्हारी छाती चीर डालेगी !”

“तुम... ! तुम... ! !” बौना हकलाया।

“हाँ ! हम, जिनके छुटकारे में वह दरवाजा बाधक है। जल्दी खोलो, नहीं तो इसकी तीखी नोक को तुम्हारे प्राण बाहर करने में देरी न लगेगी।”

डरते-डरते बौना दरवाजे की तरफ बढ़ा और चाभी ढूँढ़ने लगा। अशोक तलवार की नोक बराबर उसके सीने से लगाये रहे। दो दफा उसने अशोक की तरफ देखा और अपने गले से आवाज निकालनी चाही; लेकिन सफल न हो सका, क्योंकि वह जानता था कि अगर वह चिल्लाया तो यह उसकी अन्तिम चीख होगी।

“जल्दी करो !” जासूस ने कहा; क्योंकि कहीं से आवाजे इधर की ओर बढ़ती हुई सुनाई दे रही थी। बौने ने चाभी को ताले में डाल कर उसे घुमाने का प्रयास किया और सुन्दर ने बड़ी सिटखनी खोल दी। आवाजे सम्भवतः दरवाजे के पीछे से ही आ रही थीं। बौने ने अशोक की तरफ देखा और चाभियों में उलझने लगा। इसी बीच में जासूस ने उसे धक्का दे कर चाभी छीन ली और खुद चेष्टा की। उसी समय हाल में करीब आधे दर्जन आदमी चिल्लाये, “कैदी भाग रहे हैं !” नीचे से पुजारियों की भीड़ बराबर बढ़ रही थी और उस समय भागना एक प्रकार से असम्भव ही था; क्योंकि खुले दरवाजे से सब बाहर निकल आते और आक्रमण कर उन्हें मार डालते।

“सुन्दर मेरे पीछे-पीछे रहो !”—अशोक ने कहा और घूम कर अपनी तलवार से आगे बढ़ रहे पुजारियों को रोक दिया।

“जो कोई भी आगे बढ़ा, उसे मार डाला जायेगा ?”

पुजारी रुक गये। तब ऊपर से कालादुलुई की आवाज आयी—
“उन पर टूट पड़ो, डरपोको ! भागन मत देना दुष्टों को ! !”

:o:

:o:

:o:

“कालादुलुई, सुन लो !” अशोक ने कहा—“जो कोई बीच में पड़ेगा, उसे मैं मार डालूँगा और उसकी हत्या तुम्हारे मत्थे होगी।”

“झपटो !”—कालादुलुई चीखा—“शत्रु के टुकड़े-टुकड़े कर डालो !”

दो पुजारी जो निडर मालूम पड़ते थे और हाथ में तलवार लिए थे, आगे बढ़े; किन्तु अशोक की लम्बी तलवार के एक तीव्र

झटके ने एक को ठंडा कर दिया और दूसरा भयातुर हो कर पीछे हट गया । चार व्यक्ति और आगे बढ़े; लेकिन तलवार की विकट मार ने उन्हें आगे नहीं बढ़ने दिया ।

आफत आयी देख कर अशोक सान्याल भी जी-जान से लड़ने लगे । हर बार तलवार किसी के सीने में घुसती थी और एक पुजारी चीख कर गिरता था । जासूस किसी भी हालत में जीवित गिरफ्तार होना नहीं चाहते थे । उन्होंने इरादा कर लिया था कि वह और सुन्दर अत्याचार के उस कमरे में जीते-जी कदापि वापस नहीं जायेंगे । पुजारियों की संख्या क्रमशः बढ़ती गयी; लेकिन जासूस को उस लम्बी और पैनी तलवार ने किसी को बढ़ने नहीं दिया ।

“अपने पुजारियों को बुला लो कालादुलुई !”--अशोक चिल्लाये । लेकिन कालादुलुई गुर्रया; क्योंकि मरना उसे नहीं है, मरेगा तो एक पुजारी ही ।

“दरवाजा खुल गया है,” अशोक ने धीरे से कहा--“क्या हम बाहर निकल कर दरवाजा बन्द नहीं कर सकते ?”

लेकिन जासूस के उत्तर देने के पहले ही पुजारी फिर उनके ऊपर टूट पड़े । इस बार एक लम्बा-सा पुजारी आगे था, जिसके हाथ में अशोक के बराबर लम्बी तलवार थी । उसे जगह देने के लिए बाकी पुजारी पीछे हट गये । उसने जासूस पर वार किया; अशोक एक तरफ हट गये और उसका वार खाली गया । बाकी पुजारी इन दोनों का युद्ध देखने में मग्न हो गये ।

सब शान्त थे, सिर्फ दो तलवारों के आपस में टकराने की आवाज आ रही थी । एक दफा पुजारी का पैर खून के ढेर में पड़ कर फिसल गया, अशोक उसे आसानी से मार सकते थे; लेकिन उन्होंने अपना हाथ रोक लिया ।

“शिकार कमजोर पड़ रहा है...वार करो !” कालादुलुई चिल्लाया; क्योंकि उसे यही मालूम पड़ा ।

लम्बा पुजारी दोबारा उठ कर लड़ने लगा । अशोक सान्याल अब थकने लगे थे । उनका हाथ दर्द करने लगा था और वे जान

गये थे कि अब अधिक देर नहीं लड़ सकते; लेकिन उन्हें गिरफ्तार नहीं होना था। इस विचार ने उनमें एक नया जोश भर दिया। लेकिन तभी एक भयानक घटना होते-होते बची। एक दूसरे पुजारी को मारने में अशोक का हाथ कुछ ढीला पड़ गया और उस लम्बे पुजारी ने खेल खत्म करने के लिए तलवार की मूठ दोनों हाथ से पकड़ कर और सिर से ऊपर उठा कर वार किया। अशोक खतरे को भांप गये और एक तरफ हट गये—तलवार गिरी और वह इतने जोर से चलाई गई थी कि दरवाजे की लकड़ी में धँस गयी। अशोक की तलवार फौरन उसके गले से लग गयी।

“पीछे हटो और तलवार फेंक दो”—उन्होंने कहा।

पुजारी ने कांपते हाथों से तलवार की मूठ छोड़ दी; लेकिन तलवार उसी लकड़ी में फँसी रह गयी। जिसे सुन्दर ने निकाल लिया और बाँस की मदद करने को तैयार हो गया।

लम्बा पुजारी धीरे-धीरे पीछे हटता गया और एकाएक अशोक उछल कर पीछे हट आये। सुन्दर ने यह देखते ही फौरन दरवाजा खोल दिया और दोनों जासूसों ने बाहर निकल कर दरवाजा बन्द कर दिया। इसके पहले कि पुजारी कुछ समझ पावें, यह सब हो गया। वे दोनों अन्धकार में विलीन हो गये।

एक साथ सब पुजारी आगे झपटे, लेकिन अशोक ने मौका देख कर काम किया था। अपने नेता की हार देख कर कोई भी आगे बढ़ने में हिचकेगा और इसी हिचक ने अशोक और सुन्दर को हाल से बाहर निकाल दिया।

दरवाजा खोलने की जल्दी में सब आपस में उलझ गये, लेकिन अन्ततः दरवाजा खोल कर वे लोग पीछा करने निकल ही पड़े।

लेकिन बाहर खड़े हो कर वे सभी सोचने लगे कि किधर जायें। कालादुलुई मुट्ठी बांधे आगे बढ़ा और चिल्लाया—

“कुत्तो ! तुमने कैदियों को निकल जाने दिया—पहाड़ी का कोना-कोना छान डालो; क्योंकि यदि सूरज निकलने तक वह

नहीं पकड़े गये तो सुबह काँगू हमें वहीं सजा देगा, जो उन विदेशी शैतानों को दी जानेवाली थी ।”

:०:

:०:

:०:

दरवाजे से बाहर निकलने के बाद अशोक और सुन्दर केवल दरवाजा बन्द करने के लिये रुके और फिर इमारत के पीछे भाग चले । तलवारें हाथ में लिये वे हमले के लिये तैयार थे और जिस समय तक पुजारी लालटेन ला कर दूँढ़ने निकले; उस समय तक दोनों काफी दूर पहाड़ में निकल गये थे और अपने बचाव का आसान रास्ता दूँढ़ रहे थे ।

भाग्यवश वे उसी सड़क पर पहुँच गये, जो कारोला से चलती थी । यहाँ से वे लोग बहुत तेजी से आगे बढ़ने लगे । पीछा करने-वालों के हाथों की मशालें बहुत दूर पहाड़ पर दिखाई पड़ रही थीं ।

“हम लोग इस समय सन्तोषजनक रूप से खतरे से बाहर जा रहे हैं,” अशोक ने कहा—“फिर भी सुबह तक हमें बराबर चलते रहना है ।”

मठ के अन्दर हुई लड़ाई के कारण अशोक बहुत थक गये थे, लेकिन अभी उसका पूरा प्रभाव उन पर पड़ना शुरू नहीं हुआ था । अशोक यह जानते थे कि कारोला के समीप रुकना खतरे से खाली नहीं है; और यह भी कि यदि वे दोबारा फिर कालादुर्ग के बन्दी बन गये, तो बचना असम्भव होगा ।

सारी रात वे लोग बराबर चलते रहे । दो या तीन बार पीछे से आनेवाली खच्चरों की टोलियों से बचने के लिए उन्हें किनारे की झाड़ियों में छिपना पड़ा था । “वे लोग समाचार फैलाने जा रहे हैं और सबेरा होते-होते ल्हासा जानेवाली सड़कों पर पूरा पहरा लग जायगा । तब हमें वस्तुतः कठिनाई का सामना करना होगा ।”—अशोक ने कहा ।

“फिर भी हमें ल्हासा पहुँचने के लिए सड़क पर बने रहना है ।”—सुन्दर ने कहा ।

“हाँ, दिन में हम झाड़ियों में लेटेंगे और केवल रात के समय ही चलेंगे”—अशोक ने कहा, “किन्तु हर हालत में हमें विजय प्राप्त करनी है, इतना ध्यान रहे।”

लेकिन दोनों जानते थे कि ल्हासा तक पहुँचने में कितनी कठिनाइयाँ उन पर टूटेंगी !

साथ ही पीछे लौटने का कोई साधन भी उनके पास नहीं था। आगे बढ़ने पर कहीं दूर बहुत ही दूर ल्हासा के आस-पास सेलाई-आश्रम था; जो काँगपू का अड्डा था।

पी फटते ही उन लोगों ने सड़क छोड़ दी और एक झाड़ी में शरण ले ली, जहाँ उन्हें कोई देख नहीं सकता था। बारी-बारी से दोनों सोये और सारा दिन गुजर गया। वह ऊँचा-नीचा पठारी इलाका घनी झाड़ियों से इतना भरा हुआ था कि उनमें से दो आदमियों को ढूँढ़ना बहुत कठिन था।

“वे जानते हैं कि कभी-न-कभी हमें सड़क पर आना ही पड़ेगा !”
—अशोक ने कहा, “हमें वास्तविक खतरा सड़क पर ही है।”

अन्धेरा हो जाने के बाद उन लोगों ने फिर बढ़ना शुरू कर दिया। सड़क पर जगह-जगह पहरा लगा था। उससे बचने के लिये उन दोनों को सड़क छोड़नी पड़ती थी। लेकिन यह पहरा सिर्फ नाममात्र के लिए था। वास्तव में अब कालादुलुई को भी यह आशा न रही होगी कि दोनों जासूस ल्हासा की तरफ बढ़ने का साहस करेंगे।

दूसरे दिन रात को वे लोग पटोई झील के किनारे पहुँच गये। जहाँ से ल्हासा को सड़क मुड़ती थी। वे लोग मारे भूख के अधमरे हो रहे थे; क्योंकि इतने दिन उन्होंने सिर्फ कन्द-मूल खा कर ही बिताये थे।

करीब घंटे भर चलने के बाद वे लोग एक मोड़ पर पहुँचे, जहाँ से अशोक ने एक जगह आग जलती देख ली, जिसके चारों तरफ करीब बीस आदमी कम्बल ओढ़े बैठे थे।

अशोक और सुन्दर उन लोगों के जितना पास पहुँच सकते थे, पहुँच गये और तब एक चट्टान की ओट में से स्थिति का अध्ययन करने लगे।

“तीर्थ-यात्री !”—अशोक ने धीरे से कहा—“उनके धार्मिक झंडे को ध्यान से देखो, जो ज़मीन में गड़ा है ।”

“मेरे विचार से उन्हें हमारी देख-भाल करने को जरूर कहा गया होगा”—सुन्दर ने कहा ।

“खैर—हमें खाना लेना है और मालूम करना है कि आगे सड़क के पहरों का क्या हाल है । ये लोग पुजारियों से हमेशा डरते आये हैं, इसलिए हम इन्हें आसानी से धोखा दे सकते हैं ।”

दोनों जासूस अभी तक वही कपड़े और टोप लगाये थे, जो कैदखाने से उन्होंने हथियाये थे । तलवारें उनकी कमर से लटकी थीं और कोट के नीचे वह टोपी के दिये हुए वस्त्र पहने थे ।

“यदि इनसे दो पुजारियों पर निगाह रखने के लिये कहा गया हो, जिनके पास तलवारें हैं, तो ?”—सुन्दर ने पूछा ।

“तब भी इनकी समझ में नहीं आयेगा कि क्या करे !”—अशोक बोले—“मान लिया कि उन्हें सूचना दी गयी है । फिर भी हमें डरना नहीं है और निर्भय हो कर उनके खेमे में घुसना है; क्योंकि वे कैसे कह सकते हैं कि हम को ही खोजा जा रहा है और फिर दो धार्मिक लामाओं पर झूठा आरोप लगाना ऐसा पाप है, जिस की सजा प्राणदंड है । यदि वे लोग हमारे ऊपर कतई शक करते हैं, तो शायद वे किसी को निकट में ही स्थित किसी पहरेंदार तक सूचना देने के लिए भेजेंगे । खैर, जो भी हो.... अब आगे बढ़ो ! बस हाथ तलवार की मूँठ पर रखना और चौकन्ना रहना ।”

इसके बाद, चट्टान की ओट से निकल कर दोनों जासूस यात्रियों के डेरे के अन्दर चले गये । उन्हें आता देख कर सब यात्री खड़े हो गये ।

“तुम कहाँ जा रहे हो ?” अशोक ने रुखाई से पूछा ।

“हम ल्हासा जा रहे हैं, भाई !”—एक ने उत्तर दिया ।

“आ कहाँ से रहे हो ?”

“पोटांग की सीमा से, भाई !”

“क्या कारोला से भागे हुए दो दो विदेशी कुत्तों को इधर-उधर भागते या छिपते हुए देखा है ?”

“नहीं भाई, हमने किसी को नहीं देखा है। आप यह प्रश्न क्या पहले-पहले नहीं पूछ रहे हैं ?”

अशोक ने हँस कर कहा—“और आखिरी बार भी नहीं, लेकिन वे भाग नहीं सकते और इस सड़क पर पहरा देना काफ़ी मुश्किल काम है।...और हाँ ! आग के पास थोड़ी-सी जगह तो करो, ताकि मेरा साथी और मैं, दोनों आग ताप सकें और खाने के लिए कुछ भोजन हो तो वह भी लाओ।” और जबरदस्ती लोगों को ठेल कर एक ओर करते हुए दोनों ने अपने बैठने के लिए जगह बना ही ली। उन दोनों को गोشت और रोटी खाने को दी गयी, जिसे उन्होंने बड़ी रुचि से खाया; लेकिन अपनी खुशी छिपाये रहे। कनखियों से अशोक ने देखा कि वे लोग आपस में काना-फूँसी कर रहे हैं; बार-बार उनकी तरफ ध्यान से देखते हैं तथा सब की आँखों में सन्देह और परेशानी-सी है ! तभी अशोक ने देखा कि उनमें से एक आदमी उठ कर बाहर गया और अन्धकार में विलीन हो गया। वे लोग चुपचाप भोजन करते रहे; लेकिन यह समझ गये कि अब वहाँ अधिक देर रुकना खतरे से खाली नहीं। कुछ मिनट बाद वह दोनों उठ खड़े हुए। अपना चोगा ठीक करते हुए अशोक ने कहा—“अच्छा कुत्तो ! तुम लोग पोटाग से आये हो, या कहीं से भी, इससे हमें कोई मतलब नहीं; फिर भी कान खोल कर सुनो—हमने तुम्हारी आग से गर्मी ली है और तुम्हारा खाना खाया है, यह तुम्हारे लिए गौरव की बात है। लेकिन एक बात और है, हमें किसी कार्य-विशेष से बहुत जल्दी आगे बढ़ना है, इसलिए जो खच्चर बाहर बँधे हैं, उनमें से दो हमारे लिए ले आओ।”

दल का अगुआ कुछ हिचकिचाया। वह कुछ सोच रहा था; क्योंकि उसने एक आदमी पास के पहरे के अड्डे पर भेजा था, जिसे अशोक बाबू ने भाँप लिया था।

“अबे मूढ़ ! तू हिचकिचा क्यों रहा है ?”—अशोक गरज पड़े और घुँसा तान कर आगे बढ़े। दलपति पीछे हटता गया। तभी पीछे से जहाँ खच्चर बँधे थे, एक भारी नाटा-सा आदमी निकल आया, जो सुन्दर को कुछ पहचाना-सा लगा—यह वही टोमो था, जिसे वे लोग

सात-आश्रमों के मठ के पास छोड़ आये थे । अशोक का हाथ अपने-आप तलवार की मूठ पर चला गया; लेकिन टोमो आगे बढ़ कर उनको देखने लगा, फिर दाँत निपोरकर बोला—“मालिक ! मैं इन कुत्तों के खच्चर पालता हूँ ।” सुन्दर समझ गया कि टोमो उनकी सहायता करेगा । दलपति की तरफ मुड़ कर टोमो बोला—“सुअर के बच्चे ! क्या तुम हम सब की सिर कटवाना चाहते हो ? क्या पेटोंग के महन्त के पुजारियों की आज्ञा न मान कर के तुम उनके क्रोध का शिकार बनना चाहते हो ?”

इस पर ‘मालिक’ अशोक की तरफ मुड़ कर दलपति ने कहा—“क्षमा करें, मैंने सिर्फ इसी लिए कहा था कि हमलोग बहुत गरीब हैं, इसलिए खच्चर नहीं दे सकते ।” फिर अपने एक आदमी को उसने आज्ञा दी; और तुरत ही दो खच्चर खोल कर लाये गये । अशोक और सुन्दर उन पर सवार हो गये । इसके उपरान्त अशोक ने दलपति से कहा—“मुखी, घबड़ा क्यों रहे हो ! तुम्हारे खच्चर ले जाने का हमारा इरादा नहीं है । तुम्हारा नौकर टोमो हमारे साथ जायेगा और खच्चर ले कर वापस लौट आयेगा ।”

टोमो ने जासूस की तरफ देखा, फिर थोड़ी दूर जा कर अपने खच्चर पर सवार हो कर लौट आया । तीनों सड़क की तरफ चल दिये—“यदि कोई हमारे बारे में पूछे कि कहा जा रहे है”—अशोक ने कहा—“तो कहना कि कालादुलुई से जा कर पूछो !”

और वे तीनों, शीघ्र ही, अल्हासा की तरफ जानेवाले अन्धरे रास्ते में खो गये ।

कुछ देर तक वे लोग बढ़ते रहे, फिर अचानक अशोक ने मुख्य रास्ता छोड़ दिया और एक झाड़ी के नीचे जा कर रुक गये । सुन्दर और टोमो ने भी वही किया । तब टोमो ने पूछा—“क्यों भागे हुए पुजारी ! यहाँ क्या कर रहे थे ?”

“तो तुमने वहाँ क्यों नहीं बताया कि हमीं लोगों की खोज हो रही है ?”

“मैंने आपको पहले ही बताया था कि मुझे इन बन्दर जैसे मुँह वाले नीचों से घृणा है”—टोमो ने कहा—“और फिर मैं उनकी

खोज में क्यों सहायक बनूँ ? मेरा विचार था कि सात-आश्रमों के मठ में तुम लोग मार डाले गये होंगे !”

“हाँ, करीब-करीब ऐसा ही हुआ था... लेकिन अब हम बच निकले हैं और फिर लहासा की तरफ बढ़ रहे हैं।”

“तुम्हें यह पता ही है कि सड़क पर कड़ा पहरा है और तुम दोनों बड़ी आसानी से पकड़े जा सकते हो। फिर भी मैंने तुम लोगों का साथ दिया है, अब तो मुझे बता दो कि लहासा किस लिए जा रहे हो ?” टोमो बोला।

यह सोच कर कि इसे कुछ बताने में विशेष भय नहीं, अशोक ने प्रश्न किया—“हाँ, टोमो ! क्या तुम किसी हिन्दुस्तानी के बारे में जानते हो ?”

“अरे हाँ, याद आया ! चार हट्टे-कट्टे हिन्दुस्तानी काफी दिन हुए चुम्बी घाटी से गुजरे थे। कानजुत और पेटोंग मठ के पुजारियों ने उनका काफी स्वागत-सत्कार किया था; यद्यपि उन दोनों पुजारियों को पक्का विश्वास था कि लहासा पहुँचते-पहुँचते उनमें से शायद ही कोई बचे। वे अजनबी भारतीय सम्भवतः व्यापार-सम्बन्धी कुछ सुविधाओं के सिलसिले में इधर आये थे। कहीं वही तो न थे ?”

“बेशक वही हमारे आदमी थे... अब वे चारों हिन्दुस्तानी कहाँ हैं, उनका कुछ पता है तुम्हें ?”

“मैंने उन्हें चुम्बी घाटी से गुजरते हुए तो अवश्य देखा था, और मैं यह भी जानता था कि वे लोग अपनी मृत्यु से मिलने जा रहे हैं... !”

“हम लोग भी वही देखने के लिए निकले हैं कि वे चारों जीवित हैं या मर गये !”

“क्या सचमुच ही... !” टोमो से आश्चर्य के मारे कुछ कहते न बना।

“हाँ, सचमुच इसी अभिप्राय से इतना खतरा उठाया है हमने, अशोक ने उत्तर दिया—“और यदि वे मर गये होंगे, तो

हत्यारे को अवश्य ही इस का दण्ड भुगतना होगा—चाहे कोई भी हो...!”

टोमो ने झटके-से सिर हिला कर अनुमोदन किया और बात का सिलसिला जारी रखते हुए बोला—“जब आप लोग सात आश्रमों से वापस नहीं लौटे, तो अगले दिन मैं ग्यांत्सी चला गया। वहाँ अपने खच्चर बेच कर मैंने इन कुत्तों की नौकरी कर ली और यहाँ तक आ गया। सड़क पर हम लोगों ने दो कैदियों के भाग जाने की चर्चा सुनी। मुझे इस खबर से हार्दिक प्रसन्नता हुई; क्योंकि मैं उन स्याहपोश नर-पिशाचों से घृणा करता हूँ।”

“अच्छा, तो अब तुम हमारा यहाँ का अभिप्राय जान ही गये हो,” अशोक बोले—“और तुम्हें यह भी पता है कि यदि हमलोग पकड़े गये तो कितनी जल्दी मौत के घाट उतार दिये जायेंगे—तब इस दशा में हमारी थोड़ी से मदद और न करोगे ?”

“कैसी मदद चाहते हो, मुझसे ? कहीं मैं ही...!”

“न-न... घबड़ाओं नहीं। मैं तुम्हें अधिक खतरे में नहीं डालना चाहता ! बस उस खेमे से दो यात्रियों की पोशाक ला दो, और कुछ नहीं। इसके बाद बेशक तुम हमें छोड़कर चले जाना। क्यों नाहक खतरा उठाते फिरोगे ?”

“नहीं, मैं घबड़ाता नहीं ! मैं तुम्हारी पोशाक पहनकर साथ-साथ चलूँगा, चाहे कहीं भी जाओ। मैं मौत से नहीं डरता। मुझे वे लोग अपने ही जैसा कोई पुजारी समझेंगे।”

टोमो को अपने साथ ले जाने की इच्छा न होते हुए अशोक बाबू को उसके हठ के आगे झुकना पड़ा। वह यह सोच कर राजी हुए कि यह व्यक्ति समय पड़ने पर काम आ सकता है। कभी-कभी डूबते को तिनके का सहारा काफी होता है।

:०:

:०:

:०:

खच्चर से उतर कर टोमो दबे पाँव वापस लौटा और दस बारह मिनट में ही तमाम कपड़े ले कर आ मौजूद हुआ।

“वे मूर्ख यात्री,” टोमो ने हँसते हुए बताया—“आपस में ही लड़-झगड़ रहे हैं ! कोई कहता है कि तुम्हीं लोग भागे हुए कैदी हो और कोई इसे गलत ठहराता है तथा तुम्हें लामा सिद्ध करना चाहता है !”

टोमो जो कपड़े लाया था, गन्दे और फटे हुए थे—जैसा कि प्रायः तिब्बत के गरीब किसान पहनते हैं ।

अशोक और सुन्दर ने लामाओं की पोशाक उतार कर किसानों का फटा पाजामा और गन्दा-सा लबादा पहन लिया । इसके बाद टोमो ने लामा पुजारी की पोशाक पहन ली । फिर अशोक बाबू को इच्छा न होते हुए भी अपने कपड़े और तलवारें झाड़ी में छिपानी पड़ीं, क्योंकि इसके अलावा और कोई चारा ही न था !

दोबारा खच्चरों पर चढ़कर वे लोग चलने को तैयार हुए, तो अशोक ने टोमो को कहा—“सुनो, हमलोग दीन किसान हैं, जो ग्यांत्सी से ल्हासा जा रहे हैं और तुम हम दोनों को महाप्रभु दलाई लामा के दर्शन कराने ले जा रहे हो । हमलोग अपनी यात्रा दिन में भी जारी रखेंगे ; इसलिए यदि कोई पूछे, तो यही उत्तर देना । . . . अब आगे बढ़ना चाहिए !”

मुख्य सड़क पर पहुँचकर वे तीनों बिना किसी विघ्न-बाधा के डेढ़-एक मील बढ़ गये । तभी अँधेरे में से एक पुजारी प्रगट हुआ—उसके पीछे पाँच या छः सिपाही थे !

“कौन हो तुम ! . . . और रात को सफर करने का क्या कारण है ?” पुजारी ने प्रश्न किया ।

“हम लोग गरीब किसान हैं, जो महाप्रभु के दर्शनों के निमित्त ल्हासा जा रहे हैं ।”

पुजारी ने लालटेन उठा कर उन तीनों के चेहरों को अच्छी तरह देखा । अशोक बाबू ने पुजारी को पहचानने की चेष्टा की, पर वह अपरिचित ही था ।

सम्भवतः उस पुजारी की इतने ही से तसल्ली हो गयी और लालटेन झुका कर सिपाहियों समेत फिर अँधेरे में विलीन हो गया ।

ये लोग फिर बड़ चले । रात में दो या तीन बार वे रोके गये; और प्रत्येक बार वे चकमा देने में सफल रहे । दिन में भी उन्होंने सफर जारी रखा, कहीं रुके नहीं—सिवाय नित्य-क्रिया से निपटने या या भोजन करने के । उन्हें बराबर आगे बढ़ते रहना था—क्योंकि उनको मालूम नहीं था कि उनके पीछे लगे भयंकर पुजारियों की गति-विधि या हलचल क्या है ?

एकाएक मोड़ पर टोमो ने अपना खच्चर रोक दिया और उँगली से इशारा करते हुए बोला—“वह देखो, लहासा की पवित्र नदी—कीचू !”

निकट ही ‘खम्बा’ का दर्रा था, जिसमें से होकर सड़क नीचे की ओर गयी थी और एक रमणीक घाटी में पहुँचती थी । इसी घाटी में उन लोगों वह रात व्यतीत की, और भोर होते ही चल पड़े । वे लोग ‘चामक’ नाम के स्थान की ओर तेजी से बढ़ चले, जो पवित्र ‘कीचू’ के तट से तीन मील दूर था । वहाँ भी उनसे कई प्रश्न पूछे गये, काफी जाँच पड़ताल हुई; पर वे बच निकलने में सफल हुए । ‘कीचू’ को उन्होंने लकड़ी की बनी विचित्र नाव से पार किया । घाट से एक टेढ़ी-मेढ़ी, साँप की तरह बल खाती हुई पगडण्डी द्वारा वे तीनों उस चट्टान के कगार पर पहुँचे, जो ठीक कीचू पर स्थित था । यहाँ से वह पवित्र नदी बिल्कुल गंगा की तरह चौड़ी और स्वच्छ थी । जगह-जगह नीलकंठ, सारस और बगुले काफी तादाद में उड़ रहे थे । चारों ओर की दृश्यावली से अपनी आँखों को तृप्त करते हुए वे लोग टुलुङ्ग नामक कस्बे में से गुजरे । उस समय सूरज पहाड़ियों की ओट में छिपने जा रहा था । एक टूटे-फूटे घर की ओट में वे लोग रुके और टोमो गाँव से खाना लाने चला गया ।

भोजन कर चुकने के बाद टोमो बोला—“आओ, ज़रा इधर आकर तो देखो !”

अशोक और सुन्दर ने चुपचाप उसकी आज्ञा का पालन किया और टोमो के साथ पहाड़ी के किनारे तक गये । टोमो ने उँगली के इशारे से दिखाया.....!

उनके सामने—कुछ बील दूर—चौड़े समतल पठार पर एक सुनहला गुम्बज दृष्टिगोचर हुआ, जो अँधेरे में भी जगमगा रहा था ।

“वह ल्हासा का ‘पोटाला’ है, जहाँ तिब्बत के महाराज, तथागत के अवतार महाप्रभु दलाई लामा निवास करते हैं !”

‘ल्हासा’ का नाम सुनते ही सुन्दर की नसे तन गयी । उसने भीतर ही भीतर सिहरन-सी महसूस की ! यद्यपि इस समय वह रहस्यमय शहर दिखायी नहीं पड़ रहा था, फिर भी कल तक वे लोग वहाँ अवश्य पहुँच जायेंगे । वही कहीं सेलाई का प्राचीन मठ है, जहाँ मेजर भण्डारी और उनके तीनों साथी नरक-यातना भोग रहे होंगे ।

इसके उपरान्त, बिना कोई बात-चीत किये, वे लोग थके-माँदे लौट आये और बिस्तर पर लेटे-लेटे रात भर अपना आगे का कार्यक्रम सोचते रहे । वास्तव में तीनों में से कोई न सो सका था ।

:०:

:०:

:०:

आगे बढ़ने से पूर्व यह तय हुआ कि ल्हासा तक बिना कोई छेड़खानी या कार्यवाही किये चुपचाप बढ़ा जाये, और वहाँ किसी जगह रुक कर सेलाई के मठ में घुसने की तरकीब निकाली जाय ।

सुबह-सबरे वे लोग फिर अपनी-अपनी खच्चरों पर सवार हो गये और मुख्य सड़क पर बढ़ चले । अशोक बाबू ने अनुमान लगाया कि ल्हासा तक पहुँचने में कम-से कम सात मील और खच्चरों की पीठ पर बैठ-बैठे टिक-टिक, हट-हट करना होगा । दुर्गम पहाड़ी रास्तों पर खच्चर की पीठ पर बैठ कर सफर करना कोई आसान काम नहीं । इसी तरह बढ़ते-बढ़ते अन्त में वे लोग ‘चिंगपोरी’ नामक चट्टान पर पहुँच गये, जो ल्हासा को अपनी ओट में लिये थी । इसी पर चढ़ कर उन लोगों ने तिब्बत के उस रहस्यमय पवित्रतम नगर पर दृष्टि डाली । अब कहीं अशोक बाबू और सुन्दर की समझ में आया कि ल्हासा को गुप्त शहर क्यों कहते हैं !

अशोक बाबू ने उँगली से दशति हुए कहा—“मुझे विश्वास है कि यहीं कहीं आस-पास मेजर भण्डारी ने डेरा डाला होगा—और वह ऊँचे कंगूरोवाली पत्थर से बनी भूरी बेडौल इमारत सेलाई मठ ही है !”

सुन्दर ने उस तरफ देखा । करीब आधा मील दूर चिंगपोरी की छाया में एक बेडौल मठ बना था, जिसकी दीवारें समय की ठोकरे खा-खा कर काली पड़ चुकी थीं—शान्त और गम्भीर—एक विचित्र-सा भय अपने में समोये !

“सम्भवतः वे लोग अब भी उसी के अन्दर हों !” सुन्दर बुदबुदाया—“काश ! यदि उन तक हम यह सूचना पहुँचा सकते कि सहायतार्थ उनके दो साथी यहाँ तक बढ़ आये हैं ! !”

“हमें धैर्य से काम लेना होगा, सुन्दर ! नहीं तो शत्रु हमें भी दबोच लेगा !” अशोक बाबू ने धीरे से कहा—“हमारी जीत हमारी ही सतर्कता पर निर्भर करती है ।”

“किन्तु. . .”

किन्तु-परन्तु से तो काम निकलेगा नहीं, यहाँ अदम्य साहस और सूझ-बुझ की आवश्यकता है—और मुझे विश्वास है कि सफलता मिल कर ही रहेगी ।”

:०:

:०:

:०:

टोमो की तरफ घूम कर अशोक ने पूछा—“उस मठ के विषय में तुम्हें क्या जानकारी है ?”

“यह मठ अपनी क्रूरता और अत्याचारों के कारण बहुत बदनाम है । कहा तो यहाँ तक जाता है कि इस मठ का प्रधान ‘काँगपू’ दलाई लामा से भी अधिक शक्तिशाली है । मृत्यु भी उसकी आज्ञा का पालन करती है । सेलाई के मठ में जिसका शासन है, वह व्यक्ति इन पहाड़ियों से भी अधिक वृद्ध है । एक महान् सहारक शक्ति उसने एकत्र कर ली है । मैंने सुना है कि किसी दिन वह सारे संसार के विरुद्ध युद्ध-घोषणा करनेवाला है ।

वह कौन है, मैं नहीं जानता !...उसकी शकल किसी ने आज तक नहीं देखी; लेकिन इतना सभी जानते हैं कि ये सब स्याहपोश लामागण उस महान् अदृश्य शक्ति की कठपुतली मात्र हैं ।”

“क्या वास्तव में उसकी शकल किसी ने नहीं देखी; फिर भी तिब्बत-निवासियों को वह युद्ध की प्रेरणा देता है, बड़ी ही विचित्र बात है...!”

“हाँ, सचमुच ही । लोगों का विश्वास है कि एक-न-एक दिन वह अवश्य प्रकट हो जायेगा ।”

“कब ?”

“जिस दिन उस को इस की आवश्यकता महसूस होगी, वह स्वयं ही तिब्बत के शान्तिप्रिय लोगों के आगे-आगे चलेगा—सारे विश्व से लड़ने । युद्ध की घोषणा करते समय उसे किसी से छिपने की जरूरत न होगी; वह सर्वशक्तिमान है और साथ-ही-साथ भूत, भविष्य और वर्तमान की प्रत्येक गतिविधि से परिचित भी ।”

“सम्भव है, यही हो !” अशोक बाबू ने दबे स्वर से कहा । ऊपर पहाड़ी पर स्थित सेलाई के रहस्यमय मठ के किसी कोने से एक घण्टे के बजने की धीमी-धीमी विचित्र आवाज़ आ रही थी । कुछ देर तक तो अशोक न जाने क्या सोचते रहे, फिर नीचे उतर कर उस जगह पहुँचे, जहाँ खच्चर छोड़े थे । कोई घण्टे भर बाद अशोक बाबू, सुन्दर और टोमो लहासा में पहुँच गये । सँकरी सड़कों पर वे लोग इधर-उधर झाँकते हुए बढ़ रहे थे । सड़क के किनारे बने हुए मकान पुराने और गन्दे थे । सड़क पुरानी ऊबड़-खाबड़ और पथरीली थी । इधर-उधर कुत्ते भौंक रहे थे—यह था लहासा, दुनिया से एक दम अलग-थलग, अपनी विचित्र सभ्यता और थाती को सीने से चिपटाये हुए !

पुजारी, यात्री, किसान तथा लहासा निवासी वहाँ की पतली सँकरी सड़कों पर आ-जा रहे थे । टोमो उन्हें एक लम्बी नीची सराय में लिवा ले गया । खच्चरों को घुड़साल में बाँध दिया गया । सराय के बड़े कमरे के बीच एक बड़ी मेज पड़ी थी और फर्श पत्थर का बना था ।

जीने के ऊपर एक कमरा था, जिसमें सोने के लिए लकड़ी के तल्ले थे ।

खाने-पीने के बाद अशोक ने सुन्दर से कहा—“हमें पहले यह देखना है कि सेलाई मठ का कोई पुजारी ल्हासा में आता है या नहीं !”

टोमो, जो अभी तक भीड़ में कुछ देख रहा था, उनके पास आया और बोला—“चलो, ज़रा बाहर सड़क पर घूम आयें । जितने सुरक्षित हम यहाँ हैं, उतने ही बाहर भी । खैर, अब बाहर जाकर बात करेंगे ।”

अशोक जानते थे कि जब तक कोई ऐसा पुजारी न मिल जाय, जो उन्हें अच्छी तरह पहचानता हो, उनके पकड़े जाने का कम डर है ।

सराय के बाहर जा कर टोमो बोला—“वे सिर्फ तुम्हीं को नहीं ढूँढ़ रहे हैं; बल्कि उस पुजारी को भी, जिसने तुम्हें भागने दिया । लोग कहते हैं कि वे भी ल्हासा में है ।”

“कालादुलुई !” अशोक ने पूछा ।

“हाँ वही । मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ, जब तुम लोगों का पता नहीं लगा, तो वह भी कारोला से गायब हो गया; क्योंकि वह जान गया था कि उसका अन्तिम समय आ गया है ।”

“और वह भी ल्हासा पहुँच चुका है ?”

“हाँ, और कहीं छिपा है । तुम्हारे विषय में लोगों का विचार है कि या तो पहाड़ियों में मर गये हो या अब भी छिपे हो । लेकिन खोज जारी रहेगी जब तक कि तुम्हारी हड्डियाँ न मिल जायें । कालादुलुई का विचार था कि तुम कारोला से वापस लौट गये, इसलिए उसने अपने आदमियों को उसी तरफ भेजा था । ल्हासा की तरफ की सड़क पर पहरा ज़रूर था, लेकिन उनमें से तुम्हें कोई पहचानता नहीं था ।”

“तो अब कालादुलुई शिकार है, शिकारी नहीं !”—अशोक ने कहा ।

दोपहर को लोग सराय में लौट आये। सुन्दर और टोमो को वहाँ छोड़कर अशोक कुछ शहर के बारे में जानकारी हासिल करने चले गये। काफी रात हो जाने पर जब वापस आये, तो सुन्दर उनका इन्तजार कर रहा था।

“सुन्दर, हमें बहुत छिप कर रहना पड़ेगा !” अशोक ने कहा—
“एक सँकरी सड़क पर मैं उस लम्बे पुजारी के सामने पड़ गया, जिसके साथ हाल में मैंने तलवार चलाई थी। मेरे विचार से उसने मुझे पहचाना नहीं। गर्दन झुका कर मैं आगे बढ़ गया, लेकिन वह मुझे बाद में घूरता रहा था।”

“उसने आपका पीछा तो नहीं किया ?”

“नहीं उसने नहीं। इसका मुझे विश्वास है; फिर भी हमें बहुत सतर्क रहना है, क्योंकि...”

तभी टोमो घबराया-सा अन्दर आया—दलाई लामा के सिपाहियों ने सराय को घेर लिया है और किसी को ढूँढ़ रहे हैं—पता नहीं हमें या किसी और को ! यदि हम लोगों को ढूँढ़ रहे हैं, तो समझो अन्त आ गया !”

“यदि मेरा पीछा किया भी गया होगा, तो यह असम्भव है कि इतनी जल्दी खबर पहुँच जाय !” अशोक ने कहा—“आनेवाले क्षणों का सामना करने के लिये निडर हो कर नीचे चलो।”

सीढ़ियों से उतर कर वे लोग बड़े कमरे में आ गये। वहाँ सब तरह के लोग कमरे में जमा थे। वे तीनों अभी कमरे में आये ही थे कि मुख्य दरवाजे से एक पुजारी दाखिल हुआ और उसके साथ करीब एक दर्जन सिपाही भी थे।

“कोई भागने की चेष्टा न करे !” पुजारी ने कहा—“हम एक भगोड़े पुजारी को ढूँढ़ रहे हैं और यह इमारत घिरी हुई है।”

उसने तिब्बती भाषा में कुछ आज्ञा दी और सब सिपाही एक पंक्ति बना कर खड़े हो गये, और दूसरी आज्ञा पा कर कमरे के सब व्यक्तियों को चार पंक्तियों में खड़ा कर दिया गया।

अशोक, सुन्दर और टोमो दूसरी पंक्ति में पास-पास खड़े थे। पुजारी ने एक-एक को देखना शुरू किया। पहली पंक्ति

का निरीक्षण कर के दूसरी शुरु की थी कि अचानक एक बाधा आ गयी ।

दरवाजे में दो सिपाही फिर दिखायी पड़े । वे एक व्यक्ति को घसीटते हुए ला रहे थे, जो पहाड़ियों के-से फटे-पुराने कपड़े पहने था ।

पुजारी घूम पड़ा ।

“स्वामी ! यह हमें इमारत के पीछे भूसे के ढेर में छिपा मिला ।”

“यहाँ लाओ !”—पुजारी ने कहा । और वे लोग उस चीखते-चिल्लाते पहाड़ी को ला ही रहे थे कि एकाएक सुन्दर और अशोक की नसें तन गयीं !

वह अभागा पहाड़ी कालादुलुई ही था !

:०:

:०:

जब उस कालादुलुई को घसीट कर कमरे में लाया गया, उस समय उसका चेहरा भय के मारे सफेद हो रहा था ।

“दया !”—वह चिल्लाया—“भगवान् तथागत के लिए दया... ! दोष मेरा नहीं है ! !” और वह जमीन पर गिर कर रोने-चीखने लगा—“दया ! . मैंने अपना कर्तव्य ठीक से निभाने की चेष्टा की थी । मुझे थोड़ा समय और दो, ताकि मैं उन दोनों कैदियों को ढूँढ़ सकूँ ।”

“चुप कुत्ते !”—पुजारी ने रुखाई से कहा—“तुमने तथागत के प्रतिनिधि को क्रोधित कर दिया है, अब बचने का कोई चारा नहीं है ।”

अशोक और सुन्दर जान गये कि वे लोग बहुत बड़े खतरे में पड़ चुके हैं, क्योंकि यदि कालादुलुई ने उन्हें देख कर पहचान लिया तो जरूर भंडाफोड़ कर देगा और इस सूरत में शायद ही वे अपनी जान बचा सकें ।

उस पुजारी ने कुछ इशारा किया और दो सिपाहियों ने कालादुर्लुई को खड़ा कर दिया । टोमो कुछ झिझका, फिर किसी के रोकने के पहले ही उसकी तरफ भाग निकला...

“तुम बुद्ध के निकृष्ट पुजारी, जिसने मेरे बेटे की हत्या की थी ! अच्छा है, कुत्ते की मौत मरो ताकि मेरा बदला चुके । नाश हो तुम्हारा और पेटोङ्ग के...!!”

इसके आगे वह नहीं कह सका—पुजारी के इशारे पर छः सिपाहियों ने टोमो को भी पकड़ लिया । अशोक और सुन्दर टोमो के इस पागलपन से हक्के-बक्के रह गये, लेकिन यह पागलपन उसका उचित ही था । उस समय मालूम पड़ता था कि टोमो को बचाने का कोई रास्ता नहीं ।

अशोक और सुन्दर वहाँ से हट रहे थे, तभी उनके रास्ते में एक लम्बा-तगड़ा पहाड़ी खड़ा हो गया—“नाश हो इन कसाइयों का !...हम इसका बदला अवश्य ले लेंगे !”

कमरे से निकल कर वह उस सराय के छज्जे पर पहुँच गया और सड़क पर जमा भीड़ को सम्बोधित करने लगा ।

“चलो मौका अच्छा है,” अशोक ने कहा—“वह टोमो को छुड़वाना चाहता है—आओ, उसकी मदद करें ।”

सड़क पर शोर बढ़ता जा रहा था । उस पहाड़ी से अशोक ने कुछ कहा और वह फिर कहने लगा—

“क्या तुम उन नीच पुजारियों को जाने दोगे ? उस बेचारे यात्री ने तो सिर्फ एक दुष्ट पुजारी का मजाक उड़ाया था, जो थोड़ी देर का मेहमान है और जिसने उसके लड़के की हत्या की है, वह क्या हमारे देखते यातना सहेगा ?”

उसके भाषण ने भीड़ पर काफी प्रभाव डाला और चिल्लाते हुए अन्दर घुस कर, उन लोगों ने चारों तरफ से सिपाहियों पर हल्ला बोल दिया । स्याहपोश पुजारी जान बचा कर भाग गया और अपने सर्दार को भागते देख सिपाहियों ने भी हथियार रख दिये । तब तक अशोक और सुन्दर भी कमरे में आ गए—उस समय तक टोमों आज़ाद हो चुका था ।

वह पहाड़ी फिर बोला—“मुझसे सुनो ! तुम में बहुत-से ऐसे हैं, जो इन पुजारियों के द्वारा सताये गये हैं । आज रात की घटना से वे लोग किसी भी समय तुम्हारे ऊपर हमला कर सकते हैं । क्या तुम लोग इस प्रकार चूहों की तरह मरना पसन्द करोगे ? मैं कहता हूँ कि हथियार ले कर तैयार हो जाओ और आज रात को ल्हासा से कूच कर दो ।”

भीड़ तैयार थी, मानों वे लोग इसी दिन का इन्तजार कर रहे थे !

करीब घंटे भर बाद सब लोग तैयार हो कर सड़क पर इकट्ठे हो गए । जो हथियार जिसे मिल सका, वह उसने ले लिया । सबसे आगे अशोक, सुन्दर और वह पहाड़ी और पीछे-पीछे सब लोग ल्हासा से बाहर की तरफ चल दिये । उन पर हमला नहीं किया गया और जल्दी ही वे लोग पहाड़ों में बनी गुफाओं में पहुँच गये, जहाँ उन लोगों ने अपना मुख्य अड्डा बनाया था । और यहीं रुक कर मौके का इंतजार करना उन्हें उचित भी लगा ।

रास्ते भर अशोक उस अपरिचित पहाड़ी से बातें करते रहे । यह तो नहीं बताया कि वह कौन हैं और तिब्बत क्यों आये हैं; लेकिन इतना अवश्य जता दिया कि उन निर्दोष भारतीयों को बचाने के लिए वह सेलाई के मनहूस मठ में अवश्य ही घुसेंगे । उसने भी उनकी भरसक मदद करने का वादा किया और कालादुलुई को गिरफ्तार करने की सौगन्ध भी खायी । लम्बी यात्रा के बाद वे लोग गुफा में पहुँच गये और आराम से लेट गये ।

:०:

:०:

दो दिन तक अशोक और सुन्दर अपने इन नये मित्रों के साथ रहे और यह निर्णय किया गया कि संघर्ष में जब तक सफलता न मिले, तब तक कालादुलुई को छोड़ा न जाय ।

सुन्दर और अशोक के साथ-साथ, उन खतरनाक पहाड़ियों के बीच से सेलाई मठ तक पहुँचाने के लिए एक पहाड़ी का जाना

तय हुआ। वहाँ वह तब तक इधर-उधर छिप कर रहेगा, जब तक कि अशोक और सुन्दर मठ के अन्दर घुसने में सफल न हो जायें !

यदि ऐसा मौका पड़े कि आप को हमारी मदद की जरूरत पड़े, तो इसे फौरन वापस भेज दें।”—उस पहाड़ी नेता ने कहा।

टोमों उसी खेमे में रुका, क्योंकि वह कालादुलुई के साथ रहना चाहता था। तीसरे दिन अशोक, सुन्दर और उन का पहाड़ी गाइड खच्चरों पर सवार हो कर अड्डे से रवाना हुए। उनकी यात्रा मजे में हो गई और दूसरे दिन शाम को सेलाईमठ की भूरी दीवारें उन्हें नजर आने लगी। नीचे की तरफ इशारा करते हुए गाइड ने कहा—“हम लोग नीचे उतरेगे और इस घाटी की एक गुफा में मैं खच्चरों को ले कर रुका रहूँगा। आगे छिप कर जाना ही ठीक होगा।”

वहाँ पहुँच कर उन लोगों ने खाना खाया। फिर अशोक ने पहाड़ी गाइड से कहा—“यहाँ तुम दो दिन आराम करना, अगर दूसरे दिन की शाम तक हम लोग न लौटें तो समझ लेना कि हमारा अन्त हो गया और लौट कर तुम अपने सरदार को बता देना। फिर जैसी उनकी मर्जी होगी करेंगे। लेकिन यह जगह छोड़ कर मत जाना, क्योंकि किसी समय भी मैं अपने साथी को सहायता माँगने के लिए भेज सकता हूँ। यहाँ तुम सुरक्षित हो।”

पहाड़ी और खच्चरों को वहीं छोड़ कर अशोक और सुन्दर सेलाईमठ की तरफ बढ़ने लगे। उनके पास अपनी रक्षा के लिए केवल एक-एक चाकू था। उनके रिवॉल्वर तो उसी खंडहर में छीन लिये गये थे। यद्यपि कालादुलुई यह न जानता होगा, कि उन्हें कैसे काम में लाया जाता है !

“तो यह हमारी यात्रा का अन्तिम चरण है !”—दो घण्टे चलने के बाद अशोक बोले—“अभी तक जीत हमारी रही; लेकिन सबसे कठिन कार्य तो अब हमें करना होगा !”

“हम लोग इसमें भी अवश्य सफल होंगे !” सुन्दर ने कहा—“कामना सिर्फ यही है कि मेजर भण्डारी और उनके साथी जीवित हों !”

उस आश्रम की काली-भूरी भयानक दीवारें उनके सामने घूम गयीं और सुन्दर के अपने भीतर सिहरन के साथ-साथ एक अव्यक्त जोश का अनुभव हुआ ।

सेलाई-मठ—रहस्यमय, भयानक काँगपू का अड्डा !

अशोक ने देख लिया कि आश्रम के चारों तरफ बगीचा है, जो एक ऊँची दीवार से घिरा है और यही रहस्यमय बगीचा था, जिसका जयन्त ने जिक्र किया था । वे लोग उस दीवार के पास खड़े थे और अब समस्या अन्दर घुसने की थी ।

अशोक ने कमर झुका कर सुन्दर को अपने ऊपर चढ़ा लिया और फिर खड़े हो गये । सुन्दर दीवार के सिरे पर पहुँच गया, उस पार कूद कर उसने अशोक को सहारा दिया और वे भी पार कर गए ।

अशोक के इशारे पर सुन्दर घास पर उनके साथ आगे बढ़ा—बढ़ते-बढ़ते वे लोग एक लकड़ी के दरवाजे तक पहुँच कर रुक गये, जो आश्रम की दीवार में बना था और अन्दर से बन्द था । अब वे लोग दीवार के बगल से बढ़ते गये और एक खुली खिड़की के पास रुके ।

अशोक ने झाँक कर देखा—एक पुराने-से कमरे में लालटेन के आगे एक पुजारी बैठ कर कोई किताब पढ़ रहा था । उसके कंधे पर चाभियों का बड़ा-सा गुच्छा लटक रहा था । सुन्दर को अँधेरे में ले जाकर अशोक ने समझाया—“खिड़की से कुछ गज दूर एक दरवाजा है और वह पुजारी उसकी देख-भाल करता है । थोड़ी देर बाद हम लोग उसे बुलायेंगे और हमला करके काबू में कर लेंगे । उसके बाद अन्दर...”

“अन्दर पहुँच कर हमें बिल्कुल अपने ऊपर भरोसा करना है; क्योंकि सबसे ज्यादा खतरा वहीं होगा ।”

“अगर मेजर भण्डारी जिन्दा हैं”—सुन्दर ने कहा, “तो यहीं कहीं होंगे ।”

“इस मनहूस आश्रम में आशा है, हम शीघ्र ही घुसने में सफल होंगे !”—अशोक बुदबुदाये—“और फिर बिना मेजर भण्डारी और उनके साथियों को अपने साथ लिये लौटेंगे नहीं !...काँगपू का

यह प्रधान अट्टा है और यहीं हम उससे अच्छी तरह निपट सकते हैं !”

:०:

:०:

बहुत देर तक वह लोग बाहर छिपे बैठे रहे । आश्रम से बहुत धीमे स्वर में घण्टे बजने की आवाज सुनाई पड़ी, जो शायद रात की पूजा समाप्त होने की सूचक थी । इसके बाद फिर पूर्ण निस्तब्धता छा गयी । सुन्दर का मस्तिष्क न जाने क्या-कुछ सोच रहा था, जब अशोक ने कहा—“अब हम लोग अपना काम शुरू करते हैं । पूजा समाप्त हो गयी है और अब भोर में होगी । हम लोग उस पुजारी को दरवाजे पर बुलायेंगे और उसे अपने कब्जे में करेंगे । पर याद रहे कि उसे चिल्लाने न देना, नहीं तो सब काम गड़बड़ हो जायगा !”

खिड़की से दोबारा झाँक कर देखने पर मालूम हुआ कि वही पुजारी डचूटी पर है । खिड़की छोड़ कर दोनों दरवाजे के पास पहुँचे और एक-एक तरफ दीवार से पीठ लगा कर खामोश खड़े हो गये । तैयार हो कर अशोक ने अपना बड़ा चाकू निकाला और धीरे-धीरे पत्थर पर रगड़ने लगे । इसकी आवाज सुन कर पुजारी उठा और देखने के लिए निकला ।

अशोक और सुन्दर तो तयार ही खड़े थे ! साँकल खुलने की आवाज हुई; वह आ रहा था !

‘सुन्दर... तैयार !’—अशोक फुसफुसाये ।

दरवाजा खुल गया और अगले ही क्षण देहलीज पर वह पुजारी खड़ा था । अचानक दोनों तरफ से दो व्यक्ति उस पर झपट पड़े । एक हाथ ने उसका मुँह बन्द कर दिया—फिर उसे झटका दे कर गिरा दिया गया और आक्रमणकारी उसके ऊपर थे । अपनी कमर से अशोक ने रस्सी खोल कर उसके हाथ-पैर बाँध दिये और मुँह में कपड़ा ठूस दिया—“इसे शीघ्र अन्दर ले चलो, सुन्दर !”

फौरन ही उसे उठाकर दोनों व्यक्ति उस छोटे कमरे में चले गये । अशोक ने दरवाजा बन्दकर दिया और उसके मुँह का कपड़ा खोल कर एक लम्बा चाकू दिखाते हुए, धमकीपूर्ण लहजे में बोले—

“अच्छा अब मेरे प्रश्नों का उत्तर दो, नहीं तो यह चाकू तुम्हारे होश ठिकाने लगा देगा !”

वह पुजारी भयभीत नजर से जासूस को घूरता रहा ।

“कुछ समय पहले,” अशोक ने कहा—“तीन भारतीयों ने यहाँ डेरा डाला था । उन्हें काँगपू ने कैद कर लिया । एक भाग गया, लेकिन तीन बच गये । बताओ, अब वे तीनों कहाँ हैं ? यहाँ कैद हैं या मर गये ? बताओ, नहीं तो चाकू अन्दर घुसता है ।”

“मैं... मैं कुछ नहीं जानता !” पुजारी फुसफुसाया ।

“तो तुम मृत्यु पसन्द करते हो !” अशोक ने कहा—“मेरे पास अधिक समय नहीं है, मैं एक-दो-तीन कहूँगा और इस पर भी तुमने जवाब नहीं दिया तो उसी बुद्ध की शपथ, मैं चाकू घुसेड़ दूँगा ।”

“एक !” और अशोक धीरे-धीरे चाकू पर जोर बढ़ाते गए ।
“दो !!” वह पुजारी काँप उठा ।

“ती... ”

“रुको, मैं बताऊँगा !”

जिन तीन भारतीयों के विषय में तुम पूछते हो, वे बहुत दिन हुए यहाँ आये थे । कैदी हो जाने के बाद हमें कुछ पता नहीं कि वे कहाँ हैं या कैसे हैं ?”

“लेकिन वे यहीं हैं ?” अशोक ने कड़क कर कहा—“और इसी आश्रम के किसी तहखाने में ?”

“मैं नहीं कह सकता !” वह बोला, “इस आश्रम में बहुत से कैदी हैं, लेकिन उनके पहरेदार बोल नहीं सकते ।”

“क्यों ?”

“उनकी जबानें काट डाली गयी हैं... !”

“ताकि काँगपू के विषय में कुछ बता न सकें !”—अशोक ने कहा ।

“मैं तुम्हें इसलिए बता रहा हूँ कि तुम जान जाओ कि तुम्हारे लिए वहाँ क्या है। अब मुझे छोड़ दो और चले जाओ।”

जासूस ने सोचा कि ऐसा करने से उस कैदी की शामत आ जायेगी, क्योंकि यदि उनके अन्दर घुसने की बात का पता लग गया तो काँगपू जरूर उससे जवाब तलब करेगा। दूसरी बात यह थी कि वह पुजारी भी चाहता था कि जल्दी से जल्दी वे लोग वहाँ से चले जायें।

“यदि तुम लोग सोना चुराने आये हो, तो...!”

“नहीं यह बात नहीं”—अशोक ने उत्तर दिया—“मेरा चाकू देख लो और ठीक-ठीक बताओ कि वे तीनों कैदी कहाँ बन्द है?”

“मैंने कभी सुना नहीं कि वह हटाये गये हैं या मार डाले गये हैं।”

“तो बताओ तुम्हारा काँगपू कहाँ है?”

“वह यहाँ भी रहता है और कहीं और भी रह सकता है। उस का शरीर कहीं और हो सकता है तथा आत्मा यहाँ रह सकती है।”

“हमें उसके शरीर से मतलब है!”—अशोक बोले!

“आप भी क्या पूछते हैं? काँगपू अमर है और वह हर जगह है। जो बतवि तुमने मेरे साथ किया है, वह उसने देख लिया होगा।”

“धीरे बोलो,” अशोक ने कहा—“मैं...!”

दरवाजे पर किसी के आने की आवाज आ रही थी।

“हो भाई!” एक आवाज आई, “सो गये क्या?... जो दरवाजे बन्द हैं!”

उस पुजारी के कान के पास होंठ ले जा कर अशोक बोले—“जैसा जवाब दोगे, वैसा ही करूँगा!” और चाकू इतना दबाया कि उसकी नोक करीब-करीब अन्दर ही घुस गयी होगी! पुजारी ने भय-मिश्रित दृष्टि से ताकते हुए उत्तर दिया—“सो कहाँ रहा हूँ? मैं तो भगवान् तथागत की जीवनी का अवलोकन कर रहा हूँ!”

“तब ठीक है!” आवाज आयी, “काँगपू ने तुम्हारे लिए एक समाचार भिजवाया है, दरवाजा खोलो।”

अशोक और सुन्दर ने एक-दूसरे को देखा । फिर जल्दी से पुजारी के मुँह में कपड़ा बाँध कर अशोक दरवाजे तक गये और साँकल हटा कर दरवाजा खोल दिया । जैसा कि उन्होंने सोचा था, बाहर से दूसरे पुजारी ने धक्का दिया और अन्दर घुसा । इसके पहले कि देख कर वह कुछ समझ सके, दोनों उस पर झपट पड़े । उसी क्षण अशोक ने पैर मार कर किवाड़ बन्द कर दिये ।

कुछ मिनटों में वह भी बाँध दिया गया और अपने साथी के बगल में डाल दिया गया ।

“अब मेरे पास बरबाद करने को अधिक समय नहीं । फौरन काँगपू का पता बताओ, नहीं तो तुम्हारी जवान जड़ से.....!”

चाकू गले पर लगा कर अशोक ने मुँह का कपड़ा हटा दिया ।

“मैं तुम्हें जानता हूँ, पापी कुत्ते !” दूसरा पुजारी चीख कर बोला—“और तुम्हें यह भी बताये देता हूँ कि काँगपू को पता लग चुका है कि तुम इस आश्रम की तरफ आ रहे हो !” उस की आवाज तेज़ होती देख कर अशोक बाबू ने शीघ्रतापूर्वक फिर मुँह में कपड़ा घुसेड़ दिया ।

इतने में पहले कैदी का मुँह खोल कर सुन्दर ने पता लगा लिया कि पहली पूजा बड़े मन्दिर में पौ फटते होती है और इस समय शायद ही कोई बाहर मिले; क्योंकि सब अपने-अपने कमरों में रहते हैं । किन्तु पौ फटने में अभी घण्टे भर की देर थी । दूसरा पुजारी कपड़ों पर एक लाल टोपी पहने था, जो छोटे लामा की निशानी थी । उसके कपड़े उतार कर अशोक ने पहन लिये और उस की उँगली से अँगूठी भी, जिसमें खूनी लाल पत्थर जड़ा था । सुन्दर ने पहरेदार के कपड़े पहन लिये और किवाड़ बन्द करके दोनों बाहर निकल आये ।

चारों तरफ सतर्कता से देख कर अशोक सुन्दर से बोले, “फौरन उस पहाड़ी के पास जाओ, और जो व्यक्ति हमारा इन्तज़ार कर रहा है, उसके साथ खेमे में चले जाना और सरदार से कहना कि मैं मठ में घुस गया हूँ और अब मदद माँगता हूँ । आज से चौथे दिन की रात को तुम इस दरवाजे पर मेरे लिए सहायता ले कर आना । यह दरवाजा खुला मिलेगा । अगर खुला न हो, तो समझ लेना

कि मैं मर गया हूँ या कैदी हूँ । तब काम खत्म करने का बोझ तुम्हारे कंधे पर होगा, अब फौरन जाओ, और काम में जुट जाओ ।”

अगले ही क्षण सुन्दर ने अशोक को नमस्कार किया और झेंधेरे में विलीन हो गया ।

:०:

:०:

:०:

कुछ देर अशोक बाबू खड़े-खड़े सोचते रहे, लेकिन फिर उसी पथरीले गलियारे में चलने लगे । उनके पकड़े जाने का डर बहुत ही कम था; क्योंकि निम्न श्रेणी का कोई भी व्यक्ति छोटे लामा से सवाल नहीं कर सकता था । वे इन आश्रमों और मठों का रहस्य पूरा जानते थे । जिन बेजबान सिपाहियों के विषय में उस पुजारी ने कहा था वे कोई कैदी ही रहे होंगे और यही किसी जगह अपने दिन पूरे कर रहे होंगे तथा उसी जगह का पता जासूस सम्राट् भी लगाना चाहते थे । उनके पास अधिक समय नहीं था । कुछ ही देर में बड़ा घण्टा बजेगा और सारे गलियारे पुजारियों से भर जाएंगे । करीब पन्द्रह मिनट तक वह एक गलियारे से दूसरे में और दूसरे से तीसरे में चक्कर लगाते रहे; लेकिन कुछ पता न चला । उन्होंने एक चक्कर और लगाया । इस बार वह एक सँकरे गलियारे के सामने पहुँचे, जहाँ एक सिपाही पहरा दे रहा था । उन्होंने चाहा कि निकल जाएँ लेकिन उसने अपनी तलवार से रास्ता रोक दिया । कुछ बेसब्री से अशोक बाबू ने अपनी उँगली आगे कर दी, जिसमें लाल पत्थर की अँगूठी थी । उस सिपाही ने तलवार हटा ली और अदब से एक तरफ खड़ा हो गया ।

अशोक तुरन्त समझ गये कि यह लाल नगीनेवाली अँगूठी अवश्य ही कांगपू का शक्तिशाली चिह्न है । जीने से उतर कर, आगे बढ़ने पर उनके कानों में कराहने, रोने तथा सिसकने की आवाजें पड़ीं । बेशक ये ही वे कोठरियाँ हैं, जहाँ सेलाई के अभागें कैदी बन्द होंगे । और हो सकता है कि इन्हीं में से किसी कोठरी में मैजर् भण्डारी और उनके साथी भी हों । गलियारे के अन्त में एक कमरा था

जो खुला था। अशोक उसके अन्दर दाखिल हो गये। कमरे के चारों तरफ लकड़ी की लम्बी चौकियाँ बनी थीं, जिन पर गन्दे चीथड़े लपेटे और बदबू से भरे व्यक्ति उकड़ें लेते थे। कमरे के बीचों-बीच एक मेज थी, जिस पर बहुत-से आदमी बैठे थे। हर एक के गले में चाम्रियों का एक गुच्छा था !

यह था बेजबान पहरेदारों के रहने के लिये विश्राम-गृह ! दरवाजे पर जासूस को खड़ा देख कर सब उठ कर खड़े हो गये और चुपचाप सिर झुका कर नीचे देखते रहे; क्योंकि सब गुँगे थे। अपने सबसे पास के दो गुँगों को उन्होंने इशारा किया। वह बड़ी हिम्मत का काम करने जा रहे थे। बिना किसी हिचक के वे दोनों व्यक्ति उनके पीछे-पीछे उस कमरे तक गये, जहाँ दोनों पुजारी पड़े थे।

उँगली के कठोर निर्देश पर दोनों पहरेदारों ने एक-एक कैदी को उठा कंधे पर डाल लिया और जासूस के साथ वापस लौट चले। जैसा अशोक ने सोचा था, वही हो भी रहा था। आश्रम के उस निचले भाग में रहने से ये लोग बहुत कम पुजारियों को देख पाते थे; अतः उनका इन कपड़ों में जाना और दो कैदियों को लाने के लिए कहना कोई नयी बात न थी। उन्हें इससे कोई मतलब नहीं था कि यह क्यों और कैसे हुआ; पर वास्तव में अशोक इस समय बड़े खतरे में थे। यदि बड़े घण्टे के बजने से पूर्व ही वे उन पुजारियों को ठीक से बन्द करवा देते हैं, तो सबेरे दीवार का दरवाजा खुला देख कर लोग यही समझेंगे कि पुजारी भाग गये। ये पहरेदार कुछ कहेंगे नहीं; क्योंकि कह ही नहीं सकते। गलियारे के सिरे पर पहुँच कर अशोक ने कहा—“इन दोनों कीटों को अलग-अलग कोठरियों में बंद कर के ताला लगा दो। मुँह का कपड़ा और रस्सी देख लो, ठीक हैं कि नहीं। खाना देने के लिये बिना हमारे हुक्म के तुम उनके मुँह के कपड़े मत खोलना और न किसी दूसरे को अन्दर जाने देना; नहीं तो कुत्ते की मौत मरोगे।”

सिपाहियों ने इशारा किया कि वे सब कुछ समझ गये हैं। जब तक वे कैदियों को बन्द करें तब तक अशोक बाबू खड़े रहे।

जब कोठरियों के दरवाजे बन्द हो कर, उन पर दो-दो ताले लटक गये, तो उन्होंने चैन की साँस ली और घूम कर चल दिये ।

तभी मन्दिर में बजनेवाले घण्टे ने आश्रम की निस्तब्धता भंग कर दी । मन्दिर में पूजा आरम्भ होने ही वाली थी !

:०:

:०:

:०:

बिना किसी झिझक के अशोक बाबू बड़े गलियारे में से होते हुए दूसरी मञ्जिल पर स्थित बड़े मन्दिर में पहुँच गये । अभी तक काफी अँधेरा था और नींद से बोझिल आँखें लिये हुए पुजारी, सिर झुकाए अन्दर आने लगे थे । मौका पाते ही अशोक पासवाले गुम्बद में घुस गये, जहाँ से एक सँकरी सीढ़ी ऊपर जाती थी । ऊपर चढ़कर उन्होंने अपने को एक छज्जे पर पाया, जहाँ से मन्दिर की सब गतिविधि दिखायी पड़ती थी । उस छज्जे पर कोई रोशनी भी नहीं थी । एक कोने में अपने को छिपा कर वे बैठ गये और नीचे की गति-विधि देखने लगे ।

बड़े मन्दिर के एक सिरे पर भगवान् बुद्ध की एक बहुत ऊँची मूर्ति बनी थी । उसके सामने एक वेदी बनी हुई थी, जिस पर छः बड़े-बड़े सुनहले दीये जल रहे थे । वेदी के सामने एक पत्थर की बड़ी शिला रखी थी, जिस पर बहुत से खून के छीटे पड़े थे । तथा-गत की मुख्य प्रतिमा से कुछ दूर बुद्ध की एक त्रिमूर्ति बनी थी; जो भूत, भविष्य और वर्तमान काल के बुद्ध की परिचायक थी । अन्त में कई हाथोंवाले बुद्ध की मूर्ति दिखायी पड़ी । इसके सामने भी एक वेदी और एक शिला रखी थी ।

हर मूर्ति के सामने नीचे, सफेद और पीले रङ्ग के कपड़े पहने पुजारी खड़े थे । मन्दिर की दीवारों और खम्भों पर तरह-तरह के भयानक चित्र बने थे । एक भाग खास मन्दिर से अलग बना था और इसके बीच में बड़े भारी-भारी पर्दे पड़े थे, जिससे कोई इधर से उधर न जा सके । मन्दिर में घी के हजारों सोने-चाँदी के दीये जल रहे थे ।

अशोक ने देखा कि मूर्तियों के सामने खड़े हुए सब पुजारी एकाएक चौकन्ने-से हो गये हैं। पता नहीं, कहाँ से समूह-गान की धीमी-धीमी आवाज़ आ रही थी। सिर झुका कर लाल कपड़े पहने एक पुजारी बुद्ध की सबसे बड़ी प्रतिमा के पास गया और सिर झुका कर वन्दना की। उसके पीछे-पीछे एक पंक्ति में बीस पुजारी और आये। उन्होंने भी ऐसा ही किया। वह पुजारी हर मूर्ति के पास गया और प्रणाम करके फिर बड़ी मूर्ति की तरफ बढ़ा। सामूहिक प्रार्थना की आवाज़ भी धीरे-धीरे कम होती गयी और जब वह वहाँ पहुँच कर खड़ा हो गया, तो साज़-संगीत भी शान्त हो गया। अशोक ने अन्दाज़ा लगाया कि वह पुजारी इस मन्दिर का प्रधान लामा होगा।

मुँह से कुछ मंत्र का उच्चारण करते हुए उस लामा ने अपने हाथ सिर के ऊपर उठा लिये। हर एक का सिर झुका हुआ था और सब शान्त थे, सिर्फ वही लामा ऊँची आवाज़ में भगवान् की प्रतिमा को सम्बोधित कर कहने लगा—

“ओ तथागत् ! अपने सेवकों की तरफ देख, जो तेरे प्रिय दूत काँगपू की आज्ञा का पालन करते हैं। वे सब लड़ने के लिए बेचैन हो रहे हैं। वह दिन कब आयेगा, जब युद्ध की घोषणा होगी ? हमें बस तेरी आज्ञा का इन्तज़ार है, ओ त्रिकालज्ञ !... हमें बता—कितने दिनों बाद काँगपू हमें लड़ाई के रास्ते पर ले जाने में सफल होगा ?”

उस लामा की आवाज़ यद्यपि सधी हुई थी; लेकिन अशोक को लगा कि वह रटा-रटाया भाषण दोहरा रहा है ! इसलिए जब बुद्ध-प्रतिमा के मुँह से आवाज़ आयी, तो उन्हें आश्चर्य नहीं हुआ। लेकिन मन्दिर में उपस्थित प्रत्येक पुजारी सहम कर घुटनों के बल हो गया।

“सुनो, मेरे सेवको ! वह दिन निकट है, जब मेरा मानसपुत्र काँगपू समस्त अधार्मिक संसार के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करेगा... पवित्र ल्हासा का आतंक दुनिया के ओर-छोर तक होगा, साथ ही मेरा काँगपू भी सब पर शासन करेगा !!”

“अरे मूढ़ो !...तुम आवाज क्यों नहीं पहचान पा रहे हो !”
अशोक बुदबुदाये ।

प्रतिमा से फिर आवाज आयी—“अपनी आँखों से मैं स्पष्ट देख रहा हूँ कि तुम कितने परेशान हो ! पर शीघ्र ही तुम्हें ज्ञात होगा कि क्या होनेवाला है ?”

धीरे-धीरे मन्दिर की सब बत्तियाँ बुझ गयीं और खिड़कियों पर पर्दे डाल दिये गये । मन्दिर में घोर अन्धकार छा गया; किन्तु अशोक भी प्रत्येक क्षण की कार्यवाही को उत्कण्ठा से देख रहे थे !

अचानक त्रिकालेश्वर बुद्ध के सामनेवाली वेदी से आग की लपटें निकलने लगीं । वे धीरे-धीरे बढ़ती गयीं, बढ़ती गयीं और एक विशेष आकार में ढलने लगीं—यहाँ तक कि लपटों में से एक पिशाचनुमा भयंकर चेहरा दिखायी पड़ने लगा । यह चेहरा अत्यन्त डरावना था । अशोक ने साँस रोक ली और आगे झुक कर देखने लगे ।

“देखो, मेरे सेवको !” आवाज आयी—“मेरे मानसपुत्र काँगपू को देखो ! काँगपू जो अजर-अमर है; और जो हजारों वर्षों से ल्हासा पर राज्य कर रहा है ।”

मन्दिर में काँगपू की जय-जयकार गूँज उठी !

धीरे-धीरे चेहरा गायब हो गया और तब एक बड़े शहर की भव्य छाया-सी बनने लगी, जिसमें बहुत से सुनहले पैगोडा, मठ और ऊँचे स्तूप नज़र आ रहे थे !

“अब पवित्र ल्हासा को देखो !”—आवाज़ गूँजी—“बहुत पहिले इस का ऐसा भव्य रूप था । उस समय यह संसार का सबसे अच्छा और स्वच्छ नगर था ।”

धीरे-धीरे शहर गायब हो गया और आग की लपटें और धुएँ के बीच एक ओर शहर दिखायी पड़ा, जिसे अशोक बाबू ने तुरन्त पहचान लिया । वह था टटे खंडहरों एवं टेढ़ी-मेढ़ी गलियोंवाला ल्हासा—जहाँ निम्न-कोटि के गन्दे मनुष्य इधर-उधर घूम रहे थे !

“अब वर्तमान ल्हासा देखो । कितना फर्क है ? जो नगर पहले मानवता और सम्यता का केन्द्र था, अब उसकी दुर्दशा को भी देख लो !”

धीरे-धीरे वह दृश्य भी लुप्त हो गया; लपटें खत्म हो गयीं और एक बार फिर अन्धकार छा गया। तब भविष्य के बुद्ध की प्रतिमा की बेदी से लपटें निकलीं। उसमें हजारों आदमियों के झुण्ड बढ़ते हुए दिखायी पड़ रहे थे और सबसे आगे एक घुड़सवार जा रहा था।

“अब देखो !” गम्भीर शब्द गूँजे—“मेरे अनुयायी युद्ध के मार्ग पर निर्भय बढ़ रहे। जो सबसे आगे है, वही काँगपू है। अमर काँगपू—जो तुम्हें विजयी बनायेगा और ल्हासा को पुरानी ख्याति प्रदान करेगा।”

दृश्य फिर तेज़ी से बदल गया। अब एक सुन्दर रमणीक शहर दिखायी पड़ा। बड़ी-बड़ी इमारतें, सुन्दर मठ और सबसे ऊँचा एक आलीशान पैगोडा !

“युद्ध जीतने के बाद भविष्य का ल्हासा देखो ! मेरे सेवको, तैयार रहो। वह दिन दूर नहीं है, जब मेरी आज्ञानुसार हथियारों से लैस हो कर तूम लोग काँगपू के साथ अर्धर्मियों के खून की नदी में स्नान करने चलोगे।”

लपटें बुझ गईं और एकाएक हजारों दीये जल उठे। मन्दिर में फिर रोशनी फैल गयी। लाल कपड़े पहने हुए प्रधान लामा पुजारियों की तरफ घूम कर बोला—

“भूत, वर्तमान और भविष्य के बुद्ध के सामने तुमने अपनी आँखों से सब कुछ देख ही लिया है कि क्या था, क्या है, और क्या होगा ? और मैं तुम्हें बताता हूँ कि आज रात के अन्तिम बलिदान के बाद काँगपू प्रगट होगा। निकट भविष्य में हम सभी को शान्ति का रास्ता छोड़ कर युद्ध का रास्ता अपनाना होगा। काँगपू का यही आदेश है—तुम सब के लिए !”

:०:

:०:

:०:

पूजा समाप्त हो गयी। सब पुजारी मन्दिर से चले गये, सिर्फ एक-दो नौकर बाकी रह गए, जो दीये ठीक कर रहे थे या सफाई में लगे थे।

अशोक बाबू जानते थे कि इस समय तक पुजारियों के अदृश्य हो जाने का पता लग गया होगा; लेकिन कोई ऐसी उत्तेजनाजनक बात नहीं हुई और वे सारा दिन उसी पत्थर के छज्जे में छिपे रहे।

उनके सामने मन्दिर में कई एक बार पूजा हुई, लेकिन ऐसा मालूम पड़ रहा था कि जैसे वहाँ उनके होने का किसी को आभास तक नहीं। रात को जब अन्तिम पूजा भी खतम हो गयी, तो अशोक बाबू नीचे उतरे और बड़े गलियारे में पहुँच गये। वहाँ से वह पर्दे की तरफ मुड़े और उस तरफ से मन्दिर में घुसे। वहीं कोई खटका हुआ। धीरे-धीरे बढ़ते हुए वह सबसे बड़ी बुद्ध-प्रतिमा तक पहुँच गये। प्रतिमा के दोनों ओर जालियाँ टँगी थीं, और एक तरफ की जाली हटा कर वे आगे बढ़े। सामने पहली गली की ओर सिरे पर एक कमरा कुछ ऊँचाई पर बना था। दरवाजे पर एक बौना खड़ा था। उसका हाथ बड़ी तलवार की मूँठ पर था और मुँह अशोक की तरफ! उसके हाथ बहुत लम्बे और शरीर बेडौल-सा था, लेकिन देखने में वह शक्तिशाली नजर आ रहा था। उसने मुँह से एक विचित्र-सी गिलगिलाने की आवाज निकाली और तब अशोक की समझ में आया कि वह बौना पहलवान भी गूंगा है।

मठ के जिस भाग की वह रखवाली कर रहा था, वह ठीक प्रतिमा के पीछे पड़ता था और उसी जगह को अशोक ढूँढ़ रहे थे। उन्हें विश्वास था कि जो आवाज बुद्ध-प्रतिमा के मुँह से निकली थी, वह अवश्य ही किसी मनुष्य की थी। प्रतिमा के सिर तक पहुँचने का कोई रास्ता अवश्य यहीं-कहीं होगा। वहाँ पहुँच कर मन्दिर में जो कुछ हो रहा है, सब दिखायी पड़ेगा और आवाज को किसी ध्वनि-विस्तारक यंत्र के द्वारा तेज किया ही जा सकता है।

अशोक बाबू इसी का पता लगाना चाहते थे। मामूली चालाकी थी, लेकिन सीधे-साधे पुजारियों को बेवकूफ बनाने के लिए काफी!

बौने की तरफ बढ़ कर अशोक बाबू ने अपनी अँगूठी दिखायी, लेकिन बौने ने सिर हिला कर तलवार की मूँठ पर हाथ रखा।

“सुनो!” अशोक ने कहा, मुझे महान् काँगपू से जरूरी मिलना है और इसी समय...!”

किन्तु वह बौना इस बहकावे में नहीं आया और तलवार उठाए हुए आगे बढ़ा। अशोक पीछे हटे और हटते गये। वह बौना भी न जाने क्या-कुछ गिलगिलाता हुआ आगे बढ़ता आया; यद्यपि वह बोल नहीं सकता था। यदि अशोक बाबू आगे बढ़ने की तनिक भी चेष्टा करते, तो वह फौरन वार कर बैठता। उस गलियारे में एक मोड़ पर आते ही अशोक बाबू ने अपनी सारी ताकत इकट्ठी कर ली और एकाएक घूम कर बौने की कलाई पकड़ ली, जिसमें तलवार थी। एक हाथ से कलाई उमेठ कर दूसरे हाथ से तलवार छीन ली। यह आक्रमण इतना अचानक हुआ कि बौने की समझ में कुछ नहीं आया कि क्या करे !

पीछे हट कर तलवारवाला हाथ ऊपर उठा कर अशोक बोले “एक पग भी आगे बढ़ाया, तो अपना सिर अलग समझो !”

लाल-मुख आँखों से बौना अशोक को घूर रहा था। वह अपने कार्य में निष्फल हो गया था और उसे पता था कि काँगपू उसको क्या सजा देगा ? तड़पा कर मारनेवाली मौत ! इससे अच्छा है कि इस छोटे लामा अर्थात् अशोक बाबू से जूझ कर ही मरा जाये !

हाथ फैला कर और सिर झुका कर वह उनके ऊपर झपटा, लेकिन एक तरफ हट कर अशोक बाबू ने उसकी खोपड़ी पर तलवार का एक करारा वार किया और अगले क्षण एक कराह के साथ बौना वहीं ढेर हो गया। आगे बढ़ कर उन्होंने एक कपड़ा फाड़ कर उसका मुँह बाँध कमरे में बन्द कर दिया। फिर हाथ-पैर जकड़ कर तथा उसे घसीट कर एक पत्थर के पीछे छिपा दिया।

तलवार उठा कर वह रुक गये और कुछ सुनने की चेष्टा करने लगे। वातावरण शान्त था, लेकिन अशोक बाबू ने कुछ ऐसा महसूस किया कि कोई उन्हें अवश्य देख रहा है। कोई अदृश्य ताकत अवश्य उनके पास खड़ी है। लेकिन इस भावना को निकाल कर वह दरवाजे की तरफ बढ़े, जिस पर वह बौना पहरा दे रहा था।

दरवाजे की मूठ पकड़ कर वह पहले तो कुछ झिझके, लेकिन फिर मूठ घुमा दी। दरवाजा चरमरा कर थोड़ा-सा खुल गया।

उन्होंने देखा कि वह दरवाजा एक चौकोर पत्थर के कमरे का है, जिसमें एक मेज और एक कुर्सी पड़ी थी। कुर्सी पर एक व्यक्ति बैठा था। वह अशोक को घूर रहा था और उसके हाथ में एक रिवाँल्वर था, जिसका निशाना उन्ही की ओर था।

अशोक मानों काँप-से गये, किन्तु रिवाँल्वर से नहीं, उस व्यक्ति की क्षण-क्षण घूमनेवाली विचित्र तीक्ष्ण दृष्टि से ! आज जीवन में प्रथम बार अशोक सान्याल का मनुष्य रूपधारी एक दुष्ट आत्मा से सामना हुआ था।

अगारे की तरह लाल आँखें उसके पीले चेहरे में से घूर रही थीं। चेहरा विल्कुल मुर्दे के समान सिकुड़ा और कठोर मालूम पड़ता था—चौड़ी नाक, पतले ओंठ, पतली-लम्बी गर्दन, जिसमें सोने का चौड़ा तावीज पड़ा था; जिसमें लाल सुर्ख पत्थर जड़ा हुआ था।

कपड़े पीले रंग के और रेशमी थे। उँगलियाँ लम्बी थीं और आध-आध इंच लम्बे नाखून मालूम पड़ते थे। और अचानक अशोक को याद आ गया। यही वह चेहरा था, जो त्रिकालेश्वर बुद्ध की वेदी के सामने आग की लपटों के मध्य दिखायी पड़ा था।

काँगपू !...

और उसी समय उस विचित्र व्यक्ति के पतले होंठ हिले—“आओ रुक क्यों गये ?...स्वागत है, मित्र !” वह बोला—“यह मत भूलना कि यह रिवाँल्वर तुम्हारे सीने पर है। बम्बई से सेलाई मठ तक का मार्ग बहुत लम्बा है। तुमने काफी कठिनाइयाँ झेली हैं और मेरे सेवकों के साथ बुरा व्यवहार भी किया है।”

अशोक सान्याल खामोश खड़े थे। वह व्यक्ति फिर शुष्क एवं कठोर लहजे में बोला—“किन्तु मेरी निगाहें बराबर तुम्हारे पीछे लगी थीं। तुम डॉ० जयन्त की हत्या का बदला लेने के लिए सेलाई तक बढ़ते आये; अतः सावधान होकर सुनो—मैं ही वह व्यक्ति हूँ, जिसे तुम खोज रहे थे...मैं हूँ काँगपू !

:०:

:०:

:०:

कुछ क्षण बिलकुल सन्नाटा रहा। अन्त में वह मौका आ गया था, जब सेलाई मठ के अन्दर अशोक बाबू, डॉ० जयन्त तथा ठाकुर रक्षपाल सिंह के हत्यारे के सम्मुख खड़े थे।

“तुम्हारे विरुद्ध बहुत से आरोप हैं !”—काँगपू ने कहा—
“सीमा पार करते ही तुमने पेटोंग के मठ में तथागत का अपमान किया और भाग गये। फिर तुम सात आश्रमों के खंडहरों में...”

“क्यों सुना रहे हो ?”—अशोक ने कहा—“यात्रा का वर्णन दोबारा सुनना अब रुचिकर न होगा ! मेरा यहाँ आने का अभिप्राय तुम शायद जानते ही होगे !”

काँगपू आगे झुक गया। उसकी आँखें निर्भीक जासूस को घूर रही थी और कठोर हाथों में रिवॉल्वर उनकी तरफ तना था।

“तुम्हें रुचिकर नहीं !”—काँगपू ने कहा—“सात आश्रम के खंडहर में तुमने भगवान् तथागत की पवित्र प्रतिमा को गोली मारी थी। जानते हो तुम्हारे पिस्तौल की गोली मेरे माथे में घुस कर निकल गयी थी।”

बाये हाथ की अँगुली से उसने अपने माथे पर बना गहरा निशान दिखाया, जो गोली लगने से ही बन सकता था।

“अपने मन में मोचते होगे कि यह नहीं हो सकता कि इस तरह गोली खा कर भी कोई बोलता रहे, लेकिन अमरत्व की सत्यता को तुम्हारे जैसे नवीन विचारों में रंगे लोग सम्भवतः नहीं जानते।”

“मैं अमर हूँ !”—उसकी आवाज धीमी हो गयी—“मैं काँगपू, हजारों वर्षों से तिब्बत में निडरतापूर्वक विचर रहा हूँ और हजारों वर्षों तक रहूँगा। मुझे कोई नहीं मार सकता। मौत मुझे नहीं ले सकेगी, क्योंकि मैं हूँ काँगपू...जीवन और मृत्यु का सम्राट् !”

बोलते समय उसकी आँखें बराबर अशोक की आँखों में घुसने की चेष्टा करतीं। अशोक बाबू को अपना मस्तिष्क कुछ

शिथिल-सा लगा । तभी उन्हें डॉ० जयन्त की बात याद आ गयी, जो उसने काँगपू की आँखों की सम्मोहन-शक्ति के विषय में बतायी थी ।

वह जानते थे कि यह शक्ति वास्तव में एक तथ्य है । काँगपू की जलती हुई तेज आँखें उनके मस्तिष्क पर अधिकार जमाती जा रही थी ।

इस सम्मोहन-शक्ति के प्रभाव से बचने के लिए अशोक सान्याल हर सम्भव चेष्टा करने लगे ।

“तुम अपने अमर होने की बात कह कर रहे हो; लेकिन मैं इस तलवार के एक बार में ही तुम्हें समाप्त कर दूँगा । यदि वास्तव में तुम अमर हो, तो मेरे डर से रिवाल्वर क्यों लिये हो ?”

“वह इसलिए कि,”—काँगपू ने उत्तर दिया—“यह अच्छा नहीं लगता कि एक विदेशी तथागत के प्रिय सेवक काँगपू पर अपने गन्दे हाथ उठाये और वह भी मेरे नौकरों के सामने ।”

अशोक ने आँखों के कोर से देखा कि उनके पीछे कई खम्पा-पुजारी खड़े थे । उनके वहाँ आने का उन्हें वास्तव में बिल्कुल पता ही नहीं चला था ।

वह इस समय वस्तुतः एक बड़े खतरे में फँस गये थे । पीछे से निकलने का रास्ता बिल्कुल बन्द हो गया था और सामने काँगपू के रिवाल्वर की एक ही गोली काफी थी ।

वह जानते थे कि जिस कमरे में वे हैं, बिल्कुल मन्दिर की प्रतिमा के पीछे है । बायें तरफ की दीवार से एक भारी पर्दा लटक रहा था । इस दीवार के दूसरी तरफ बुद्ध-प्रतिमा थी । इस कमरे से प्रतिमा के सिर तक जाने के लिए कोई सीढ़ी अवश्य होना चाहिए और आशा इस बात की थी कि वह सीढ़ी इसी के पीछे छिपी होगी ।

एकाएक घड़ियाल जोरों से बजना शुरू हो गया । इसकी आवाज कमरे में गूँज गई और काँगपू ने कहा—“बलिदान का समय आ गया ! और साथ ही आज रात को युद्ध की तैयारी करने का

सन्देश दिया जायेगा । मैं तुम्हें खूब जानता हूँ, अशोक सान्याल ! और तुम्हारे तिब्बत आने का कारण भी । तुम उस नीच भण्डारी को ढूँढ़ रहे हो, जो तिब्बत से व्यापार बढ़ाना चाहता था । तो सुन लो... भण्डारी जीवित है तथा साथ ही उसके साथी भी; लेकिन इस मठ में बहुत दिन कष्ट भोगने के कारण वे शक्ल से कुछ-कुछ बदल गये हैं । आज रात को वे मरेगे और उनके साथ तुम भी, उस बड़ी बलिवेदी पर जो त्रिकालेश्वर बुद्ध के सामने बनी है । युद्ध में मरनेवाले प्रथम व्यक्ति होने का सौभाग्य तुम्हें प्राप्त होगा, जो जल्दी ही विश्व-भर में फैलनेवाला है ।” हाऽहाऽहा...!!

उसकी आँखें बराबर अशोक को घूर रही थी—“तिब्बत के साथ-साथ !” वह चिल्लाया, “चीन और मंगोलिया भी युद्ध छेड़ देंगे, साथ-ही-साथ पूर्वी एशिया में भी युद्ध का बीज बो दिया गया है और यदि उसने जड़ें पकड़ लीं हैं, तो तुम्हारी देश और तुम्हारा राज्य कहाँ रहेगा, नीच ! जरा जवाब तो दो ?” उसने गुर्रा कर कहा ।

यहीं तक वह कह पाया । अशोक सारी ताकत लगा चुके थे—फुर्ती के साथ एक तरफ हट कर उन्होंने अपनी तलवार काँगपू के ऊपर जोर से फेंक दी—उसकी धार काँगपू के चेहरे पर लगी—मुँह से एक चीख निकली और कुर्सी समेत वह लुढ़क गया । पिस्तौल गरजी ओर उसके हाथ से छूट कर गिर पड़ी—गोली अशोक बावू के सिर के पास से निकल गयी । खम्पा अशोक को पकड़ने के लिए आगे बढ़े, लेकिन वह तुरन्त ही पर्दे की आड़ में हो गये । एक कीमती क्षण उन्होंने जमीन पर गिरे हुए रिवाल्वर को उठाने में खर्च किया और देखा कि नराधम काँगपू उलटी हुई कुर्सी के पास निश्चल पड़ा है । इसके बाद वे पर्दे के दूसरी तरफ निकल गये ।

:०:

:०:

:०:

अशोक बावू ने अपने बचने के लिए यह पग इसी विश्वास पर उठाया था कि पर्दे के पीछे कोई रास्ता छिपा है । यदि ऐसी बात न होती, तो वह मुश्किल में ही पड़ते । जो भी हो, उनका जीवन एक

प्रकार से मृत्यु के जवड़े में था ! लेकिन अभी तक उन्हें आशा थी कि शायद अन्तिम क्षण में उन तीनों भारतीयों को बचा सकें !!

एक लामा की तलवार अशोक के कन्धे के पास से निकल गयी, किन्तु दूसरा धार होने से पहले वे पर्दे के उस पार थे—और सामने ही उन्हें एक जीना दिखाई पड़ा । एक छनांग में दो-दो सीढ़ियाँ फाँदते हुए वे तेजी से चढ़ने लगे । उधर जीना इतना सँकरा था कि एक बार में एक ही व्यक्ति चढ़ सकता था, अतः सब सिपाही एक के पीछे एक लग गये और चढ़ने लगे । सीढ़ी के सिरे पर लोहे का एक छोटा-सा दरवाजा मिला, जो बाहर से बन्द था । अशोक बाबू साँकल खोलने लगे; लेकिन तब तक एक पुजारी सिर पर आ गया था । साँकल खुल ही रही थी कि चिल्लाकर उसने तलवार उठाई—सोचने का समय नहीं था । घूम कर अशोक बाबू ने गोली चला दी । कराह के साथ पुजारी पीछे लुढ़का—और उसके बोझ से पीछे वाले लामा भी लुढ़क गये । इस बीच में उन्होंने दरवाजा खोल दिया और दूसरी ओर जाकर फिर भीतर से साँकल लगा दी । और अब उन्होंने अपनी जगह पर विचार किया । उस कमरे की स्थिति से यही सिद्ध होता था, कि वह बुद्ध-प्रतिमा के सिर में खड़े हैं । उस खोखले स्थान में घी का एक दीया जल रहा था—उनके पीछे, जहाँ मूर्ति का चेहरा था—दो काले पर्दे पड़े थे ।

वे तुरन्त समझ गये कि ये विशाल मूर्ति की आँखों को ढके हुए हैं और किसी पर्दे को हटा कर देखने से नीचे की सब गति-विधि दिखाई पड़ने लगेगी । कमरे के एक तरफ एक मेज थी, जिस पर कई प्रकार की परख-नलियाँ, रिटार्ट, जार इत्यादि रखे थे । जिनमें तमाम रासायनिक पदार्थ भरे थे । प्रतिमा के मुँह के सामने एक नली लगी थी, जिसके एक सिरे पर एक खड़ का माउथपीस लगा था । अशोक के चेहरे पर मुस्कराहट फैल गई । वह समझ गये कि अवश्य ही उस नली में माइक्रोफोन लगा होगा और जोर से बोलने के लिए खबर मुँह में लगा कर बात करनी पड़ेगी ।

इतने में दरवाजे की भड़भड़ाहट समाप्त हो चुकी थी, पुजारी यह सोचकर लौट गए कि जब अशोक बाहर निकलेंगे तब पकड़ लिए जायेंगे ।

लेकिन अशोक बाबू ने सोच लिया कि उनके बाहर निकलने से पहले बहुत कुछ हो जायगा। उसी समय उनके कानों में समूह-नान की आवाज आयी। आँख का एक पर्दा जरा-सा हटा कर अशोक नीचे देखने लगे।

उस मन्दिर में सेलाई मठ के सारे पुजारी और सेवक मौजूद थे। सब अपनी-अपनी जगह पर खड़े थे। पुजारी, लामा, महन्त यथास्थान खड़े थे। तब सेलाई का महन्त मूर्ति की तरफ मुँह कर के कहने लगा—“ओ तथागत !”—आवाज अशोक बाबू को साफ-साफ सुनाई पड़ी—“बलिदान का समय पास आ गया है और हम सब तेरे सेवक यहाँ इकट्ठे हैं—वरदान दो कि आज हमें काँगपू के दर्शन हो जायँ। हमने केवल उसकी आवाज सुनी है, जो युद्ध के समय हमारा पथ-प्रदर्शक होगा। वर दो भगवान् ! कि आज रात हमें उसके मुँह से युद्ध का सन्देश सुनने को मिले।”

महन्त की आवाज रुक गई और एक क्षण की शान्ति के बाद दो बड़े पुजारी आकर बलिवेदी के दोनों तरफ खड़े हो गये। एक तरफ से एक सिपाही हाथ में तलवार लिये आया और उसके पीछे जंजीर से बंधे तमाम कैदी।

अशोक की मुट्टियाँ कस गई—क्या वह तीनों भारतीय कैदी भी इन्हीं में है ?

उसमें कुल बारह कैदी थे। सब बलिवेदी के सामने खड़े कर दिये गये।

सब शान्त हो गये और महन्त ने फिर आह्वान किया—

“अब अपनी दृष्टि उन लोगों पर डाल, ओ तथागत ! देख उन लोगों को, जिनका तेरे निमित्त बलिदान हो रहा है। इनके खून से सन्तुष्ट होकर हमें आशीष एवं प्रेरणा दो कि युद्ध में हम विजयी हों।”

कैदियों की उस कतार में तीन आदमी खड़े थे जिनकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी, कपड़े फट गये थे, गाल पिचक गये थे और शरीर सूख कर काँटा हो गया था। शायद मौत उनके लिए ज्यादा सुखदायक

थी । वे लोग सीना ताने, सिर उठाए अपने अन्त का दिलेरी से इन्तजार कर रहे थे ।

ज्योंही महन्त खामोश हुआ, उन तीनों में से जो सबसे लम्बा था, बोला—“बुला लो अपने तथागत को, और बुला लो काँगपू को भी, ताकि उसके जुल्मसितम का नज्जारा आसानी से सारी दुनिया देख ले । लेकिन याद रखो कि तुम्हारी मृत्यु अवश्य होगी और जो भी युद्ध के रास्ते पर चलेगा उसका का भी कुत्तों का-सा अन्त होगा ! अब मजाक छोड़ कर मुझे और मेरे साथियों का बलिदान कर और देख कि भारतीय किस तरह मरते हैं !”

“शाबाश... भण्डारी !” पास में खड़े डाँ० भटनागर चिल्लाये, ‘हाँ, हाँ, हम तैयार हैं’ डाँ० रक्षपाल भी गर्ज उठे ।

महन्त की आज्ञा से दो पुजारी आगे बढ़े और मेजर भण्डारी को खोल कर पत्थर की वेदी पर ले गये । लेकिन उन्हें घसीटने की आवश्यकता नहीं पड़ी । वह खुद वहाँ तक ऐसे चले गये, जिसे देख कर कोई नहीं सोच सकता कि वह मरने जा रहे हैं । पकड़ कर पुजारियों ने उसे लिटा दिया और अपनी जगह खड़े हो गए । एक पुजारी चाकू लिये उसकी गर्दन पर था और दूसरा चाकू लिए छाती पर ।

“अच्छा विदा, मित्रो !”—भण्डारी ने कहा । “विदा दोस्त !” उसके साथियों ने कहा । उनकी आवाज भारी थी क्योंकि अपने अभिन्न साथी को इस तरह मरते देखना कोई आसान काम नहीं था !

पुजारी के हाथ ऊपर उठ गये । ठाकुर रक्षपाल और डाँ० भटनागर देख रहे थे, क्योंकि ज्योंही हाथ नीचे गिरते त्योंही चाकू से मे० भण्डारी का अन्त हो जाता । तब शान्ति भंग करती हुई आवाज आई—“हाथ रोक ले, ओ सेलाई के महन्त !” जादू की तरह सब पुजारी जमीन पर झुक गये । महन्त डर के मारे जड़वत् खड़ा रह गया क्योंकि आवाज तथागत की प्रतिमा के मुँह से निकली थी ।

“आज रात को सेलाई में अगर एक बूँद भी खून बहा !”—आवाज गरजी—“तो मेरा श्राप तुम सबको तवाह कर देगा ।”

एक दम महत्त जमीन पर बुद्ध-प्रतिमा के पैरों के पास गिर पड़ा। उसने कुछ गलती की है। कहाँ ? पता नहीं। उसके दिमाग में डर और विस्मय भरा था।

“दया !”—वह चिल्लाया—“दया, ओ तथागत ! क्योंकि मैंने... !!”

वह रुक गया। प्रतिमा की बगल से चिल्लाता हुआ एक व्यक्ति निकला। यह काँगपू था ! उसके चेहरे से खून अभी तक बह रहा था, क्योंकि अशोक की तलवार ने चेहरे पर जख्म कर दिया था।

“उस आवाज को मत सुनो।—वह चिल्लाया—“बेवकूफो ! उस आवाज पर ध्यान मत दो !! यह तथागत की आवाज नहीं है और न काँगपू की। मैं काँगपू हूँ... मैं... !”

उसकी आवाज को दबाती हुई दूसरी आवाज आई—

“उठो मेरे भक्तो ! उस बदमाश को मेरे लिए पकड़ लो।”

एक शोर के साथ सब पुजारी खड़े हो गए और गुस्से से लाल हो कर काँगपू की ओर आगे बढ़े !

:०:

:०:

:०:

प्रतिमा को आँख से नीचे देखते हुए अशोक सोच रहे थे कि काँगपू को कितनी निराशा हुई होगी ! सिवाय बेजुबान रक्षकों को छोड़ कर और किसी ने काँगपू को नहीं देखा था। वह रक्षक कुछ समझते नहीं थे। उन्हें सिर्फ काँगपू की रक्षा करनी थी और जो मना करता उसकी सजा मौत थी। उनके लिए काँगपू जीवन और मृत्यु का सरदार था !

लेकिन पुजारियों को वास्तविकता का ज्ञान न था। वे बुरी तरह काँगपू को दबोचे हुए थे।

काँगपू के रक्षक पीछे खड़े भौंचक्के हो, सब कुछ देख रहे थे, लेकिन समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें ? लेकिन फिर एकाएक उन्हें अपने कर्तव्य का ध्यान आ गया।

“कुत्तो, मेरे पास आओ !”—काँगपू चिल्लाया—“मेरे पास ! !
इन बेवकूफ लामाओं को मौत के घाट उतारो !”

वे रक्षक कूद पड़े । मार-काट मचा दी । निहत्थे पुजारी पीछे हट गए, अपनी-अपनी जान बचाने के लिए । अशोक चुपचाप देखते रहे । वह जानते थे कि इन रक्षकों को कुछ कहना बेकार था, क्योंकि वे इस आवाज की असलियत को जानते थे ।

काँगपू को अपने बीच में करके वे लोग मन्दिर के बाहर चले । जब पुजारियों को होश आया, तो अशोक बाबू ने फिर बुद्ध-प्रतिमा के मुँह से कहा—“हथियार उठाओ, पुजारियो ! इस आश्रम से बाहर जाने से पहले उस नीच कुत्ते को पकड़ लो, नहीं तो मैं आज्ञा दूँगा कि आज रात को मौत यहाँ पदार्पण करे !”

जब तक कि पुजारी हथियार ले कर बढें, तब तक काँगपू मन्दिर के बाहर पहुँच चुका था । बाहर भीषण सग्राम शुरू हुआ—रक्षक जी-तोड़ कर लड़ रहे थे । काँगपू की जान बचाने के लिए नहीं, बल्कि अपनी जान के लिए । अन्ततः वे हार कर भागे । पुजारियों ने पीछा किया; लेकिन उस अन्धकार में काँगपू का पता नहीं चला । वह गायब हो चुका था !

किरी अज्ञात भय और आशंका से काँपते हुए पुजारी वापस मन्दिर में लौट आए । मेजर भण्डारी, ठाकुर रक्षपाल और डॉ० भटनागर को समझ में नहीं आ सका कि क्या हो गया—क्या उनकी जानें बच गयीं ?

थोड़ी देर बाद महन्त अन्दर आया । वह बदमाश बुढ़ा भाग गया था, अब केवल वे लोग भगवान् से माफी माँग सकते थे, जो कि उस रात रुष्ट हो चुके थे ! महन्त ने नगाड़े पर फौरन चोट दी । सब पुजारी अन्दर इकट्ठे हो गए । जो घायल हो गए थे, वे नहीं आये ।

तथागत की प्रतिमा के पास जा कर वह महन्त घुटने टेक कर बैठ गया और बोला—“ओ बुद्ध ! हम तेरे अनुयायी तुझसे दया की भीख माँगते हैं । हम सौगंध उठाते हैं कि हम किसी-न-किसी तरह उस बदमाश को पकड़ कर अवश्य उसके किये का मजा चखायेंगे । हमारे बहुत से साथी अभी सेलाई के बगीचे में घायल और

मृत पड़े हैं—उनका खून बेकार नहीं जायेगा। उसका बदला भी हमें लेना है ! !”

अशोक बाबू को इन लोगों पर दया के साथ-साथ हँसी भी आई और उन्होंने अपना मुँह खबर की नली से लगाया और मन्दिर में आवाज गूँज उठी—“सेलाई के पुजारियो ! मेरी बात ध्यान से सुनो कि मैं आज अन्तिम बार बोल रहा हूँ। मैं काँगपू युद्ध का ‘प्यारा’ कह रहा हूँ कि जो बदमाश आज रात तुम्हारे सामने खड़ा था और जो अपने रक्षकों द्वारा यहाँ से बच कर भाग गया—अपनी मौत स्वयं ही मरेगा ! आज रात को मैं अपनी पितृ-आत्माओं के पास चला जाऊँगा, क्योंकि युद्ध नहीं होगा। ऐसा क्यों होगा, यह मत पूछो ! तुम्हारे लिए इतना काफी है कि मैं अर्थात् बुद्ध के प्रतिनिधि काँगपू का आदेश है कि सेलाई के पुजारी सारे देश में घूमकर शान्ति का संदेश फैला दें ! युद्ध तिब्बत के इस देश के लिए नहीं है, क्योंकि युद्ध का परिणाम सर्वनाश और महामारी फैलने के सिवा और कुछ नहीं !”

“यह पवित्र सन्देश भी तिब्बत देश के कोने-कोने में फैला दो कि काँगपू तथागत के प्रिय सेवक की आज्ञा है कि तिब्बत के लोग पड़ोसी देशों के साथ मेल-मिलाप से रहें। व्यापारी काफिलों को देश के भीतर आने दें। जो यह आदेश नहीं मानेगा, खून-खराबा करेगा—वह मृत्यु का अनुगामी होगा !”

पुजारी और महन्त एक-दूसरे की तरफ आश्चर्य-चकित देख रहे थे—उनकी आशा के विपरीत आज सब घटनाएँ हो रही थीं !

“मेरा आदेश सुन लिया, सेलाई के महन्त !” प्रतिमा के मुँह से आवाज फिर गरज उठी ! और फौरन घुटने टेक कर, हाथ फैला कर महन्त ने उत्तर दिया—“ओ काँगपू ! हमने तेरी बात सुन ली और जैसा तूने अभी-अभी कहा है, वह पवित्र सन्देश हम सारे तिब्बत में घूम कर फैलायेंगे। हम वादा करते हैं !”

महन्त के चुप होते ही पुजारियों में फुसफुसाहट होने लगी। काँगपू के जाते ही युद्ध के सब सपने समाप्त हो गये और ल्हासा ऐसा ही रह गया और वही पुराना कार्यक्रम। जब शोर रुक गया

तो फिर भगवान् की आवाज गूँजी—“यह अपने जाने से पहले मैं दया का एक मुख्य-कार्य और करना चाहता हूँ, सो मेरी बात सुन लो, काँगपू का आदेश ! चारों तरफ सन्देश भिजवा दो कि तमाम आश्रमों और मठों में जितने भी कैदी भरे पड़े हैं, सब स्वतंत्र कर दिये जायें, जिससे वे अपने प्रियजनों के पास पहुँच सकें । सुन लो कि ल्हासा का श्राप जितनों पर पड़नेवाला था, उठा लिया गया है । मेरा शान्ति का सन्देश हर एक से कह दो और जो इसे नहीं सुनेगा, वह कुत्ते की मौत मरेगा !” कुछ रुकने के बाद प्रतिमा में से फिर आवाज आयी—“और इन तीनों भारतीयों के लिए कान खोल कर सुन लो ! मैं काँगपू इनके पास अपना एक दूत भेज रहा हूँ, जो उन्हें भारत की सीमा तक पहुँचाने जायेगा । और तुम लोगों की पहचान के लिए मैं बताता हूँ कि वह दूत छोटे महन्त की पोशाक पहने होगा । देख लेना कि एक रक्षक उन के साथ सीमा तक पहुँचाने जाता है कि नहीं । उसे जलापला तक भेज देना । अगर किसी ने भी इन निर्दोष भारतीयों पर हाथ उठाने का प्रयत्न किया, तो वह कुत्ते की मौत मरेगा । अच्छा, यही मेरा अन्तिम आदेश था, अब मैं जाता हूँ !”

आवाज रुक गई और मन्दिर के प्रांगण में शान्ति फैल गई । लेकिन तीनों मुर्दा हो रहे भारतीयों के नेत्रों में आशा की नई लहर जागृत हो गई थी !

“मैं...मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ ?” भटनागर ने कहा ।

शान्त होते ही अशोक ने काम करना शुरू कर दिया । उन्होंने खबर की नली और माइक्रोफोन उखाड़ कर तोड़ दिये । शीशे के गिलास, रिटार्ट, बोटलें—और जितना भी सामान वहाँ था सब तोड़-फोड़ डाला और इस तोड़-फोड़ की आवाज सुन कर पुजारी सोच रहे थे कि काँगपू की आत्मा अपने पूर्वजों की आत्माओं से मिलने जा रही है । लेकिन अशोक जानते थे कि काँगपू अभी आजाद है ! यदि किसी प्रकार वह फिर इस कोठरी में आये तो...? अतः वह शीघ्र ही सीढ़ियाँ उतर कर, फिर उस कमरे में आ गए जिसमें उनका काँगपू से सामना हुआ था । पर्दा एक

तरफ हटा कर वह पुजारी के सामने पहुँच गए । वे लोग अशोक की तरफ ध्यान से देख रहे थे । जब एक हाथ उठाकर जासूस ने कहा—“सुनो महन्त ! मैं काँगपू का वाहक हूँ और इन तीन भारतीयों को इनके देश की सीमा तक पहुँचाने आया हूँ ।”

उनका दूसरा हाथ कपड़ों के अन्दर था, जिसमें रिवाँल्वर था ; ताकि जरूरत पड़ने पर काम ले सकें । किन्तु पुजारी इतने परेशान थे कि सोच न पा रहे थे । वह अशोक को भाग्यशाली समझ रहे थे कि उन्हें काँगपू ने भेजा है, जो तथागत का प्रिय दूत है ।

अशोक के एक इशारे पर तीनों कैदियों की हथकड़ी-बेड़ी खोल कर फेंक दी गई । जब सब कैदी खुल गए तो दूतरूपी अशोक ने कहा—“पुजारियो सुनो ! काँगपू ने कहा है कि कल पौ फटते ही इनके जाने का प्रबन्ध हो जाय । अब तुम भी अपने-अपने घर जाओ और शान्ति-सन्देश सर्वत्र फैला कर ही दम लो ।”

मेजर भण्डारी, डा० रक्षपाल और डॉ० भटनागर को इशारा करके जासूस सम्राट् उसी कमरे में पहुँचे जहाँ काँगपू से भेंट हुई थी । जब तीनों अन्दर आ गए, तो अशोक बाबू ने धीरे-से दरवाजा बन्द कर दिया और उन की तरफ घूम कर देखने लगे । वे तीनों शान्त खड़े उनके बोलने का इन्तजार कर रहे थे ।

“अच्छा महानुभाव !” अशोक बाबू ने कहा । किन्तु एकाएक मेजर भण्डारी चौक कर खड़े हो गये । और अशोक का कन्धा पकड़ कर ध्यान से उनका चेहरा देखने लगे ।

“कौन...तुम कौन हो ?” वे बोले, और—“इसके क्या माने हैं ?”

“इसके माने यह हैं कि अगर कोई बड़ी घटना नहीं होती, तो तुम स्वतंत्र हो !” अशोक ने कहा ।

“लेकिन तुम हो कौन !...और यहाँ कैसे आये ?”

“मैं दलाल स्ट्रीट का अशोक सान्याल हूँ”—जासूस ने उत्तर दिया—“डॉक्टर जयन्त जीवित वहाँ पहुँच गये और तुम सब का

हाल मुझे सुनाया । यहाँ मैं कैसे आया, यह एक लम्बी कहानी है, जो किसी दूसरे समय सुनाऊँगा ।”

“लेकिन मेरी समझ में नहीं आ रहा है—वह बदमाश काँगपू आखिर कहाँ है ?”

“मूर्ति के सामने जो भाग कर आया था, वही काँगपू था !” अशोक बोले—“भाग्यवश कोई पुजारी उसे पहचानता नहीं था । उसका गुप्त रहना ही उसके लिए हानिकारक सिद्ध हुआ ।”

“तब बुद्ध-प्रतिमा के सिर में कौन बोल रहा था ? यह एक आश्चर्यवाली बात है ।”

“मैं था ! पुजारियों को वश में करने का यही एकमात्र उपाय था !”

भण्डारी ने अशोक का हाथ छोड़ दिया और एक कदम पीछे हट गये—

“क्या तुम तिब्बत अकेले आये हो ?” उनकी आँखें जासूस के चेहरे पर जमी थीं और स्वर में आश्चर्य की झलक थी ।

“नहीं, मेरे साथ मेरा सहकारी सुन्दर भी था । इस समय वह उत्तरी ल्हासा में एक डेरे पर मदद माँगने गया है । क्योंकि मेरा विश्वास नहीं था कि यहाँ मुझे सफलता मिलेगी, और मुझे हर स्थिति के लिए तैयार रहना था । अभी भी हम खतरे से बाहर नहीं हैं, क्योंकि काँगपू जीवित और स्वतंत्र है । वह आसानी से तुम्हें तिब्बत के बाहर नहीं जाने देगा ।”

“वह बदमाश...!” मेजर भण्डारी की आवाज़ तेज थी—उससे लड़ने के लिए मैं हर हालत में तैयार हूँ । वह अधर्मी, दुष्ट, जाने क्या-क्या यातनाएँ देता रहा है हम लोगों को । मेरे दोस्त, जो कुछ तुमने हमारे लिये किया है, उसका धन्यवाद देने में मैं असमर्थ हूँ ! तुमने हम लोगों को साक्षात् नरक और मृत्यु के मुँह में से निकाला है । हमलोग इस उपकार को भूलेंगे नहीं ।”

डॉ० रक्षपाल और डॉ० भटनागर ने भी इस बात का समर्थन किया ।

“अच्छा, अब हमें अपनी तैयारी करनी है !”—अशोक ने कहा—“जब तक मेरा झूठ काम कर रहा है, तब तक तो हम सुरक्षित हैं; पर काँगपू के पीछा करने पर हमें परेशानी होगी ।”

“कल तड़के हम लोग यहाँ से चलेंगे । पहाड़ी से उतर कर मैं अपने सहकारी सुन्दर से मिलूँगा । क्योंकि जब तक काँगपू, जीवित है, मैं तिब्बत नहीं छोड़ूँगा !”

“तब हम भी तुम्हारे साथ रुकेंगे”—मेजर भण्डारी आवेश में बोले, “उससे हमें भी बदला लेना है । वह अमर होने का दावा करता है । हमें देखना है कि वह कितना सच बोलता है । मैं...!”

एकाएक अपना गला पकड़ कर वह रुक गये—साँस रुकती-सी मालूम पड़ी उन्हें !

“मैं...मेरा...दम घुट रहा है !”—मेजर भण्डारी बोले; फिर मुँह के बल जमीन पर गिर गये । यह सब इतनी जल्दी हो गया कि किसी की समझ में न आया कि माजरा क्या है ? कुछ गँध-सी पा कर अशोक बाबू चौकन्ने हुए । चिल्ला-से पड़े—“जहरीली गैस फैल रही है, ओफ़—जल्दी से दरवाजे की तरफ चलो !”

कूद कर वे दरवाजा खोलने पहुँचे; लेकिन उसमें ताला पड़ा था, खुला नहीं ! अशोक बाबू का गला भी सूखने लगा—घूम कर उन्होंने देखा कि डॉ० भटनागर भी ढेर हो गये हैं—एक ओर वह बड़ा पर्दा था । डॉ० सान्याल उसी तरफ बढ़ रहे थे ! किन्तु वे भी लड़खड़ाये और पर्दा पकड़ लिया; लेकिन फिर लुढ़क कर जमीन पर गिर पड़े । अशोक उस तरफ बढ़े, लेकिन वह भी लड़खड़ाने लगे—आँखों के सामने अँधेरा छा रहा था !

यह अवश्य ही काँगपू की हरकत थी ! वह चुपके से लौट आया होगा ? अशोक बाबू के मस्तिष्क में यही बात एकाएक आयी । अचानक किसी की गरज सुनाई पड़ी, उन्हें लगा कि वह गिर रहे हैं ! तो क्या यह अन्त है !! दूसरे ही क्षण जमीन पर गिर कर वे भी शान्त हो गये ।

कमरे में कोई आवाज नहीं हुई । फिर दीवार से एक चौकोर पत्थर पीछे हट गया और इस खिड़की में काँगपू खड़ा दिखाई पड़ा । उसके होठों पर क्रूर हँसी फैली थी !

वह बड़बड़ाया—“भारतीय कुत्तो ! तुम समझते थे कि बच गये !....हूँSSS!! अशोक सान्याल...बेवकूफ कुत्ते...अब देख अपनी मौत...!!!” वह हँसा, एक क्रूर हँसी !

:o:

:o:

:o:

अशोक बाबू को जब होश आया, तो उन्होंने स्वयं को हाथ-पैर बँधे और एक बड़ी कोठरी के पत्थर के फर्श पर पड़ा पाया । एक तेल के दिये की रोशनी में उन्होंने मेजर भण्डारी, रक्षपाल और डॉ० भटनागर को भी जकड़े हुए पाया । वे उठने का प्रयत्न-सा करने लगे ।

“तो मेरे दोस्त, तुम होश में आ गये ।” एक कर्कश आवाज गूँजी । सिर घुमा कर अशोक बाबू ने देखा कि दीवार के पास दुष्ट काँगपू खड़ा है । धीरे-धीरे वह आगे बढ़ा और जासूस के पास खड़ा हो गया ।

“तुमने अपना कार्य बखूबी किया—अशोक सान्याल !” वह रूखे स्वर में बोला—“और एक प्रकार से तुम जीत ही गये थे ! लेकिन मैं लौट आया हूँ और मुझे इन दीवारों के अन्दर बने हुए गुप्त रास्ते मालूम हैं । जिस दिन से तुमने सीमा पार की है, उसी दिन से तुम मेरे काम में दखल देते आ रहे हो और मेरा किया-कराया सब मिट्टी में मिलाने की चेष्टा में लगे रहे ।”

“और मैं करीब-करीब सफल भी हो गया !” अशोक ने कहा ।

काँगपू ने मारने के लिये हाथ उठाया—“तुम सफल हो गए हो, इस दृष्टि से कि तुमने मेरी वर्षों की मेहनत मिट्टी में मिला दी । लेकिन उससे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ, सिर्फ तुम लोगों की मृत्यु कुछ समय के लिए अवश्य टल गयी । पर कुछ समय में ही मैं सब कुछ ठीक कर लूँगा और सौगन्ध उठा कर कहता हूँ कि युद्ध जरूर होगा !” उसकी आवाज तेज हो गई ।

“चुप रह कुत्ते !” मे० भण्डारी चिल्लाये—“सेलाई के पुजारियों के सामने जा, तो वह तुझे चीर-फाड़ कर धर देंगे ।

जिस काँगपू पर वे लोग विश्वास करते हैं, वह कब का स्वर्ग सिंघार चुका है और वहीं मैं तुझे भेज भी दूँ। यदि मेरे हाथ तेरी पतली गर्दन पकड़ लें...तो !”

“चुप रहो !—काँगपू ने कहा—“मैंने तुम लोगों को इसलिए जीवित रखा कि युद्ध शुरू होने से पहले तुम्हारा बलिदान किया जाय; लेकिन तुम्हारा साथी जयन्त भाग गया और उसने इस पाजी कुत्ते अशोक को मेरे पीछे लगा दिया। मैं यहाँ खड़ा अपने स्वप्न टूटते हुए देख रहा हूँ और तुम लोग उसका बदला अपने खून से चुकाओगे—इतना समझ रखो ! इस जगह को कोई नहीं जानता। सुबह होते ही तुम्हारी मृत्यु, तुम्हारी बाट जोहेगी; लेकिन उन मूढ़ पुजारियों को पता नहीं होगा कि तुम लोग कहाँ हो ! तुम सब यहाँ तिल-तिल कर मरोगे, और जिस दिन तुम मरोगे, उस दिन मैं यहाँ से चला जाऊँगा और कुछ दिनों में फिर अपना खोया हुआ विश्वास जमा लूँगा।”

“काफी अच्छा प्रोग्राम है, हत्यारे, नीच, सुअर के बच्चे !” मेजर भण्डारी चीखे—“यदि मेरे हाथ खुल जाएँ, तो मैं तुझे ऐसा सबक सिखा दूँ, जो जीवन भर तुझे याद रहे !”

“मैं तुम्हारी उस जिद्दी जवान को शीघ्र ही बन्द करवा दूँगा” —काँगपू ने कहा—“अब मैं जाता हूँ और तुम देखो कि तुम लोगों के लिए क्या-क्या इन्तजाम हो रहे हैं—सेवादारी के लिए !”

उसने ताली बजाई, एक अंगरक्षक ने पीछे का दरवाजा खोल दिया। यह दरवाजा एक कमरे का था, जिसमें काफी तेज रोशनी जल रही थी। उस रोशनी में कैदियों को यंत्रणायें देने के तरह-तरह के सामान सजे हुए दिखायी पड़े !

“कई लोग वहाँ मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं,” काँगपू ने कहा—“लेकिन इतनी बुरी तरह से नहीं, जितनी बुरी तरह तुम सब मरोगे !”

धूम कर भयंकर हड़हास करता हुआ वह चला गया। दरवाजा बन्द हो गया और दो गूँगे सिपाही कैदियों पर पहरा देने लगे।

“मुझे ताज्जुब है, उसके कितने अंगरक्षक बाकी बचे हैं ?” भण्डारी ने कहा।

“पता नहीं !” भटनागर बोले, “उससे कोई लाभ नहीं, क्योंकि एक तो हम बँधे हैं और दूसरे कोई हथियार हमारे पास नहीं ।”

किन्तु अशोक बाबू चुपचाप पड़े, इस दुर्भाग्य के नये चक्कर के विषय में सोच रहे थे । उनकी और उनके साथियों की दशा बहुत खराब थी । जिस जगह वे लोग थे, उसे सिवाय काँगपू और उसके विश्वसनीय गुर्गों के अलावा और किसी को पता नहीं था । यदि सुन्दर आश्रम तक पहुँच भी जाता है, तो भी यह गुप्त रास्ता ढूँढ़ निकालना उसके बस का रोग न था, बिल्कुल नामुमकिन । सिर्फ एक ही रास्ता है, वह भी यदि सुन्दर को सूझे तो !”

कई घण्टे व्यतीत हो गये । कैदी धीरे-धीरे बात करते रहे । दो बार उनके लिए खाना आया, जिसे उन्होंने रुचि से खाया, लेकिन काँगपू का कुछ पता नहीं था । वह दोबारा नहीं आया ।

“पता नहीं वह झुरियोंवाला पीत पशु कहाँ चला गया है ?” भटनागर बोले, “न जाने यहाँ हमें कब तक रखना चाहता है ?”

“वह पोटेला राजमहल में गया होगा—ऐसा मेरा अनुमान है !” अशोक बाबू ने उत्तर दिया, बेशक वह दलाई लामा से मिलने की चेष्टा कर रहा होगा । यदि दलाई लामा काँगपू के विचारों से सहमत हो गये, तब काँगपू अपने अभिप्राय में सफल हो सकता है ।

थोड़ा-थोड़ा सो कर कैदियों ने अगले चौबीस घंटे काट दिये । कहीं से कोई आवाज नहीं आ रही थी । सभी शान्त थे । अशोक जानते थे कि वे लोग आश्रम में बहुत ज्यादा नीचे अर्थात् किसी तहखाने में पड़े हैं । वे पड़े-पड़े सोच रहे थे—उस बात के बारे में, जिसने उन्हें और सुन्दर को बम्बई की दलाल स्ट्रीट से सेलाई में ला पटका था । तभी उन्होंने देखा कि कोठरी का दरवाजा खुला और काँगपू अन्दर आया । पहरेदारों को कुछ आदेश देकर, वह आगे बढ़ा और उन्हीं के पास पहुँच कर रुक गया ।

“क्यों बे कुत्ते ! क्या हाल है अब तुम्हारा ? अभी तक तो किसी को पता नहीं चला कि तुम लोग यहाँ हो ! अशोक की दुम ! मुझे अफसोस है कि मेरा प्रोग्राम मुझे यहाँ अधिक देर

रुकने नहीं देता । वैसे तो मैं यहाँ रुक कर तुम्हारा तड़प-तड़प मरना देखता, लेकिन अब तुम घण्टे भर में ही मर जाओगे । सुन लो, अभी मेरा अधिक नुकसान नहीं हुआ है । यहाँ के शान्तिप्रिय और धर्म-भीरु लोगों में युद्ध का बीज बोने में कुछ वर्ष सम्भवतः और लग जायें ! किन्तु युद्ध अवश्य होगा यह समझ रखो ।”

“यहीं तुम झूठ बोल रहे हो, काँगपू !”—अशोक ने कहा—“तिब्बत में तुम्हारी ताकत एक तरह से समाप्त प्राय है । लोगों के मस्तिष्क में सन्देह उपज चुका है । वे सोचेंगे कि यह कैसी आत्मा है, जो एक बार युद्ध करने को कहती है, दूसरी दफा शान्ति फैलाने, और थोड़े दिन बाद फिर युद्ध के लिए भड़काती है । वे लोग इतने बेवकूफ नहीं हैं; और अब वे सोचते होंगे कि तूम अपने पूर्वजों के पास चले गये हो । जहाँ तुम लौट आये कि वह फौरन सन्देह करने लगेंगे—तुम्हारे ऊपर और तुम्हारी बातों पर !”

“तुम बेवकूफों की-सी बात करते हो !”—काँगपू बोला—“क्या तुम नहीं देख रहे हो कि मैं इन पुजारियों को जैसा चाहूँ हाँक सकता हूँ । नकाब तो अब खुल ही चुकी है और जैसा कि तुम जानते हो, मैं बुद्ध का प्यारा भी नहीं हूँ । लेकिन मेरे हाथ की रेखायें बतलाती हैं कि किसी दिन मैं बड़ी ताकत एकत्रित कर लूँगा । मैं अमर हूँ । एक दिन आएगा, जब तिब्बत सारी दुनिया पर राज्य करेगा और मैं तिब्बत का शासक बनूँगा ! मैं मायावी और जादू-सम्राट हूँ, तथा मृत आत्माएँ मेरे साथ-साथ चलती हैं !”

घूमकर उसने एक गूँगे से कुछ कहा । ठा० रक्षपाल और भटनागर उसे ध्यान से देख रहे थे और उनके चेहरे से मालूम पड़ता था कि जो कुछ काँगपू कह रहा था, उसे वे भी सत्य समझ रहे थे ।

वह गूँगा पहरेदार एक दीवट उठा लाया । काँगपू ने उसकी लौ में अपना हाथ दे दिया ।

“क्या विचार है, अशोक !”—वह बोला—“बहु खपट मेरे हाथ के माँस को क्यों नहीं झुलसा पा रही है ?”

“भ्रम में डालने की अच्छी तरकीब है !”—अशोक ने उत्तर

दिया—“तुम्हारे जैसे सस्ते बाजारू जादूगर भारत की गलियों में मारे-मारे फिरते हैं ! यह तू समझ रख !”

और उन तीनों भारतीयों की आशा के विपरीत काँगपू इस आक्षेप को भी सह गया—“अशोक सान्याल ! जो चाहे बक लो, क्योंकि तुम मृत्यु के बहुत करीब हो और मरने से पहले मैं तुम्हें बता देना चाहता हूँ कि मैं कोई जादूगर नहीं हूँ । बहुत-सी ऐसी बातें हैं, जिसे नई सभ्यता के पुजारी नहीं जानते; लेकिन वह सब तिब्बत में होता है और यह गुप्त विद्या मुझे ज्ञात है । भूत मेरे सामने है और भविष्य मैं बता सकता हूँ ।”

जितनी देर वह बातें करता रहा, अशोक को कुछ गंध-सी फैलती मालूम पड़ी, जो कोठरी में धीरे-धीरे आ रही थी । अजीब सी गंध थी वह ! वह मीठी और भीनी अवश्य थी, लेकिन जासूस को लगा कि वह विचित्र गंध उनके मस्तिष्क पर अधिकार जमा रही है । उन्होंने इससे लड़ने के लिए सारी ताकत लगा दी । काँगपू की आँखें अशोक की तरफ थीं और जब अशोक ने ऊपर देखा तो उन्हें काँगपू की आँखें अधिक बड़ी और लाल अँगारों के समान सुलगती हुई मालूम पड़ीं !

तब धीरे-धीरे आँख की जलन कम होने लगी और अशोक सान्याल की आँखों के सामने एक लम्बा रास्ता दिखायी पड़ा, जिसके दोनों तरफ ऊँचे-ऊँचे मकान बने थे और दूर से काँगपू की आवाज आई—“मैं कोई जादूगर नहीं हूँ, अशोक बाबू ! मायावी हूँ—साक्षात् त्रिकालज्ञ !! लेकिन एक शक्ति रखता हूँ, जिसे तुम लोग नहीं नाप सकते । अपने जीवन में अन्तिम बार तुम अपनी बम्बई के दर्शन कर लो !”

धीरे-धीरे दृश्य लुप्त हो गया । अशोक सान्याल ने उठने का प्रयत्न किया, लेकिन उठ न सके । दूर से किसी के गरजने की आवाज आई और वे बेहोश हो गये !

:०:

:०:

:०:

अशोक सान्याल को न जाने कब होश आया ! उनका सिर ठाड़ा के मारे बेकार-सा था । उसे दबाने के लिए उन्होंने जो हाथ उठाया तो देख कर आश्चर्य हुआ कि हाथों के बन्धन खुल गये हैं ! कुछ चेष्टा करके वह उठ कर बैठ गये । उन्होंने देखा कि अब उनकी कोठरी भी बदल चुकी है, वह कमरा कोई बीस-वर्ग फुट का होगा । छत पर एक दीया जल रहा था, उसका धीमा प्रकाश कमरे में फैल रहा था । कमरे के बीचों-बीच एक गोल छेद था, जिसका व्यास कोई चार फुट होगा ! जब उनका मस्तिष्क कुछ शान्त हुआ तो मालूम पड़ा कि दूर कहीं चट्-चट्...फट्...फट्, सर्र-सर्र...की आवाजें बराबर सुनाई पड़ रही हैं !

फर्श पर उनके पास ही मेजर भण्डारी, ठा० रक्षपाल और डा० भटनागर भी पड़े थे । खड़े होकर जासूस मेजर भण्डारी के पास गया और झुक कर देखा । कुछ देर तो मेजर भण्डारी अशोक की तरफ देखते रहे, फिर बोले—“हम लोग कहाँ हैं ? मेरे सिर में दर्द क्यों हो रहा है ?” अपना काँपता हुआ हाथ उसने माथे पर लगा लिया । फिर फर्श पर बने छेद की तरफ इशारा कर बोले—“यह छेद किस लिए बना है ?”

“शायद हम लोगों के लिए !”—अशोक बाबू ने कहा, लेकिन समझा नहीं सके कि क्यों और कैसे ?

ठा० रक्षपाल और डा० भटनागर भी होश में आते ही उठ कर बैठ गये और अपने चारों तरफ देख कर बोले—“अब क्या होगा ?”

अशोक बाबू कुछ देर खामोश रहे, फिर गंभीर स्वर में बोले—मेरे मित्रो ! जो कुछ होगा, सब थोड़ी देर ही बाद पता चल जायेगा, उसे छिपाने से कुछ फायदा नहीं ।”

मेजर भण्डारी चीखे—“यही न कि यह मौत का कमरा है और यदि हम यहाँ से निकल न सके, तो हम यहीं मर-खप जायेंगे ।”

तीनों ने सर हिलाया और आगे सुनने के लिए तैयार हो गये ।

“धीरे-धीरे इस कमरे की दीवारें गरम हो कर जलने लगेंगी । बाहर लगी हुई भट्टियों से ये गरम होती हैं । जब काफी गरम हो जायेंगी, तो धीरे-धीरे दीवारें हमारी तरफ बढ़ेंगी और समानान्तर चतुर्भुज का रूप धारण कर लेंगी !”

“और हम उस छेद में कूद जाने के लिए मजबूर कर दिये जायेंगे”—भण्डारी बोले ।

“हाँ, ध्यान से सुनिए ! आपको लकड़ियों के चटखने और चट्-चट्, भड़-भड़ जलने की आवाज सुनाई पड़ती होगी ! मेरे विचार से नीचे कोई तेज नदी बह रही है और उसमें गिर कर हमलोग...!”

वे रुके, लेकिन उनके वाक्य को पूरा करते हुए डॉ० भटनागर बोले—“चूहों की तरह डूब जाएँगे ।”

“हाँ, मेरे विचार से काँगपू का यही इरादा है ।”

काफ़ी देर तक शान्ति रही । हर कोई अलग-अलग ही सोच रहा था । जो कुछ जासूस ने कहा था, उसकी सत्यता में किसी को सन्देह नहीं था; लेकिन यह बहुत ही भयानक मृत्यु होगी और बचने का उपाय भी कोई नहीं था ।

अचानक भण्डारी को कुछ याद आ गया । वह अशोक की तरफ मुड़ कर बोला, “आपने कहा था कि यह मौतका कमरा है, अगर हमलोग यहाँ से बच न सके, तो ?” उसकी आँखों में प्रश्न था ।

“बचने की एक क्षीण-सी आशा मुझे दिखायी पड़ती है । मेरा सहकारी सुन्दर सहायता लेने गया है, लेकिन शायद ही वह समय पर पहुँचने में सफल हो ।”

“आपके सहकारी के लिए यह जगह ढूँढ़ निकालना कठिन ही है,” भटनागर बोले, “इसके विषय में सिर्फ काँगपू जानता है ।”

“मैं झूठी आशा नहीं दिखाना चाहता ।”—अशोक बोले—“लेकिन एक सहारा है, जिसकी सहायता से सुन्दर हमारा पता लगा सकता है ।”

“वह क्या...?”

“एक कैदी द्वारा वह पता लगा सकता है, जिसे हम लोग पहाड़ी पर रोके हुए हैं। उस पुजारी का नाम कालादुलुई है। वह काँगपू का मित्र है और शायद वही इस जगह पहुँचने का रास्ता जानता है। यह हमारा सौभाग्य ही होगा यदि टिकर उसे किसी प्रकार साथ लेता आये। उसी से वह सारा तथ्य मालूम कर सकता है।”

कमरे की गर्मी अब किसी को बरदाश्त नहीं हो पा रही थी !

“मेरे विचार से दीवारें खिसकने के पहले ही हमारा दम घुटने लगेगा ?”—ठाकुर रक्षपाल बोले ! और चारों लोग अपने भरसक दीवार से परे हट गये ।

“यह गर्मी यहाँ की समस्त ऑक्सीजन सोख लेगी, तब हमारा दम घुटेगा—किन्तु यह मौत अच्छी है, उस डूब कर मरनेवाली मौत से !” डॉ० भटनागर फुसफुसाये ।

किन्तु अशोक बाबू ने अपना सिर हिलाया । “इस छेद से काफी हवा ऊपर आ रही है !”—उन्होंने कहा—“और काफी ऑक्सीजन दे रही है, अतः दम नहीं घुटेगा, बल्कि हम लोग डूब कर ही मरने के लिए मजबूर होंगे !”

समय बीतता गया और दीवारें लाल होती गयीं । चारों कैदियों ने अपने कपड़े उतारने शुरू किये, यहाँ तक कि कमर तक बिल्कुल नंगे हो गये । उनका गला, होंठ, मुँह सब सूखने लगे और साँस लेना तक मुश्किल होने लगा, क्योंकि वहाँ की हवा बहुत गरम हो चुकी थी ।

“वह देखो—दीवारें खिसकने लगीं !”—भटनागर चिल्लाये ।

अशोक ने ऊपर देखा, दीवारें अब चौकोर नहीं रह गयी थीं, बल्कि समानान्तर चतुर्भुज की शकल में बदल गयीं थीं ।

कोठरी की छत से आवाज आई—“अशोक बाबू, विदा ! यह अन्त है तुम्हारे जीवन का ! ल्हासा का श्राप तुम पर गिर रहा है—अपनी आँखों से देख लो ।”

जासूस ने काँगपू की आवाज पहचान ली और लाल आँखों से उस तरफ देखा, जिधर से आवाज आ रही थी। ऊपर देखते ही ठहाका मार कर हँसने की क्रूर आवाज फिर आई, लेकिन फौरन ही यह हँसी एक चीख में बदल गई और दूसरे ही क्षण ऊपर से एक व्यक्ति काले कपड़े पहने नीचे लुढ़का और उसी छेद में समा गया—नीचे गिरते समय समय उसके कपड़ों में आग भी लग गई थी।

“यह क्या...!” अशोक बाबू चौक कर बोले। उन के कानों में छपाक की आवाज पड़ी और ऊपर से ठंडी हवा का झोंका भी नीचे आता महसूस हुआ।

“सावधान बाँस !... हम लोग यहाँ हैं !”

:०:

:०:

:०:

कोई एक घण्टे के बाद, अशोक सान्याल, सुन्दर और तीनों भारतीय कैदी, जिन्हें उन्होंने बचाया था—आश्रम के एक बड़े-से कमरे में बैठे थे—मेज पर बचा हुआ खाना पड़ा था। वह पहाड़ी बागी सरदार और उसके छः लड़ाकू जवान प्रसन्न मुद्रा में पास में ही बैठे थे। दूसरी मेज पर बोस और हथियारबन्द पहाड़ी युवक भोजन करने में जुटे थे, लेकिन उनकी तलवारे दीवार के सहारे खड़ी थीं और मठ के पुजारी उन्हें खिला-पिला रहे थे।

सुन्दर की कहानी जल्दी ही समाप्त हो गई। वह और पहाड़ी पथ-निर्देशक तेजी से खच्चरों पर चढ़ कर डेरे पर पहुँचे और उस सरदार ने, बिना किसी झिझक के, अपने पचास लड़ाकू और दिलेर साथियों को साथ लेकर सेलाई की यात्रा शुरू कर दी। लोग नियत समय से पहले पहुँच गये और यह देख कर आश्चर्य हुआ कि पुजारी उनसे मित्रता का व्यवहार कर रहे थे। सुन्दर ने महन्त से मिलने का प्रयत्न किया, तो पुजारी ने बताया कि काँगपू ने शान्ति का सन्देश भेजा है। महन्त ने सारी कथा सुनाई, तो सुन्दर की समझ में वास्तविक बात आ गयी। किन्तु बड़े दुःख के साथ महन्त ने यह भी बताया कि

उन तीनों भारतीयों का और उस दूत का, जिसे कांगपू ने भेजा था, कोई पता नहीं चल रहा है ।

तभी सुन्दर को एकाएक कालादुलुई की याद हो आई । उसे साथ लाया गया था, क्योंकि सरदार उसे आँखों के सामने से हटाना नहीं चाहता था । सरदार के चाकू के इशारे पर कालादुलुई ने उन्हें मठ के सभी गुप्त रास्ते दिखाये और उनमें जाते-जाते अचानक कांगपू से मुठ-भेड़ हो गयी, जब वह अशोक बाबू से बिदा ले रहा था । चोर-दरवाजे में से कूद कर सरदार ने अपनी तलवार का भरपूर हाथ कांगपू के सिर पर इतने जोर से मारा कि वह मर कर उसी गड्ढे में गिर गया, जो अशोक और तीनों भारतीय कैदियों के लिए बनाया गया था ।

अशोक और सब कोई शीघ्रतापूर्वक वहाँ से निकाल लिये गये और पुजारियों की सेवा-सुश्रूषा से जल्दी ठीक भी हो गये । पुजारी अब भयभीत रहे थे; क्योंकि उन्होंने इन भारतीयों के साथ बुरा व्यवहार किया था, जिन्हें भगवान् तथागत ने आजाद कर दिया था ।

उन्हें अब इस बारे में कोई सन्देह नहीं रहा था कि जो कांगपू कुछ देर पहले मरा है, वह वास्तव में एक चालबाज, दुष्ट और नीच व्यक्ति था और असली कांगपू कब का अपने पूर्वजों के पास चला गया था !

पुजारियों का व्यवहार अब बहुत ही अच्छा था और अगले दिन पाँचों भारतीय सीमा पार करने चल दिये । उनके साथ वे सब पहाड़ी भी थे, जो ल्हासा शहर की सीमा तक उन्हें विदा कर आये थे । उनको हँसते हुए अलविदा कर वे सब मस्त, फक्कड़ और निष्कपट पहाड़ी अपने-अपने गाँवों को लौट गये !

:०:

:०:

:०:

कुछ दिनों के बाद अशोक सान्याल और उनके साथियों ने अपने खच्चर जलापला की चोटी पर पहुँच कर रोक दिये और घूम

कर उस रहस्यमय शहर को देखने लगे, जहाँ उन्होंने इतने खतरे उठाये थे। डूबते हुए सूरज की रोशनीमें 'पोटाला' का राजप्रासाद इस समय भी काफी गम्भीर और भयानक मालूम पड़ रहा था !

“अच्छा !”—मेजर भण्डारी ने कहा—“काँगपू मृत्यु को प्राप्त हुआ और उसके साथ ही युद्ध की आशंका भी दफन हो गयी !”

“हाँ !” अशोक बाबू बोले, “काँगपू मर चुका है और मैं आशा करता हूँ कि अब जल्दी ही व्यापारी काफिले जलापला से ल्हासा की तरफ जाते हुए दिखायी पड़ने लगेंगे ।”

कुछ क्षण शान्ति रही। सूरज एक पहाड़ी के पीछे डूब गया और तमाम घाटी कोहरे से ढकने लगी !

“और अब हमारी भारत-यात्रा शुरू होनी चाहिए !”—हँस कर डा० भटनागर ने कहा और अपने खच्चर को एड लगा दी—“हमारा स्वर्ग से न्यारा भारत ! हमारी मातृभूमि... पितृभूमि, और मुक्तिधाम !”

सभी ने एक नारा लगाया—“जय भारत !” और डा० भटनागर की पीछे-पीछे उन्होंने अपने-अपने खच्चर छोड़ दिये ।



